वगलामुखो का नाम वेदों में 'वल्गामुखी' आया है। 'बगलामुखी' तान्त्रिक और साधारणतः चिर-परिचित नाम है। इन्हें 'त्रैलोक्य-स्तम्भिनी'—तीनों लोकों (स्वर्ग-लोक, मर्त्य-लोक और पाताल-लोक) का स्तम्भन-कारी बतलाया गया है। इनके अन्य नाम 'पीताम्वरा' (क्योंकि ये पीत वस्त्र धारण करती हैं) और 'ब्रह्मास्त्र-विद्या' हैं। इनके पति 'आनन्द-भैरव' हैं। कुछ लोगों के मत के अनुसार 'त्र्यम्बक शिव' हैं। शास्त्रों के अनुसार ये स्वर्ण-पीत रङ्ग की हैं, सुन्दर हैं। रत्न-जटित सिंहासन पर विराजमान हैं, रुचिकर परिधान पहिने हैं। माला गले में धारण किये हैं, मुकुट लगाये हैं। और भी आभूषणों से शोभायमान हैं, जो सभी पीले रङ्ग के हैं।

इनका एक हाथ शत्रु की ओर बढ़ा हुआ है, जिससे ये उसकी जीभ पकड़े हैं और दूसरे से ये उस पर गदा का प्रहार कर रही हैं। कुछ इनका ध्यान चतुर्भुजी देवी के रूप में करते हैं। दो अतिरिक्त भुजायें साधक के रक्षार्थ हैं।

मूल्य १५-०० रु० : सजिल्द मूल्य २५-०० रु०

श्रीबगला कल्पतरु

मानद सम्पादक

'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल, एम० ए०

सम्पादक

ऋतशील शर्मा, एम० ए०

प्रथम संस्करण :: श्रावण पूर्णिमा २०४० वि० :: २३ अगस्त १९८३

प्रकाशक

पं० देवीदत्त शुक्ल स्मारक
शाक्त साधना पीठ
प्रयाग-६

अ नु क्र म णि का

श्री बगलायै नमः

प्राक्कथन

श्रीपीताम्बरा बगलामुखी दश महा-विद्याओं में अपना अनूठा स्थान रखती हैं। इन्हें ब्रह्मास्त्र-विद्या, ब्रह्मास्त्र-स्तम्भिनी-विद्या, प्रवृत्ति-रोधिनी, स्तब्ध-माया, मन्त्र-जीवन-विद्या, प्राणि-प्राणापहारिका, षट्-कर्माधार-विद्या, स्थिर-माया आदि नामों से भी अभिहित किया गया है। प्रसिद्ध नाम '**श्री बगला**' ही है, जो वास्तव में संस्कृत शब्द '**वल्गा**' का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ होता है निग्रह करनेवाली।

भारतीय संस्कृति में श्रद्धा और विश्वास रखनेवाले व्यक्तियों को यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि 'मन' की शक्ति अपार है। उस शक्ति को अभ्यास के द्वारा विकसित कर असम्भव को भी संभव किया जा सकता है। अभ्यास के लिये भारतीय ऋषियों ने सर्वोत्तम उपाय '**मन्त्र**' को पाया और उसका विज्ञान शताब्दियों से परामपरागत रूप से इस देश के कुलीन परिवारों द्वारा आज तक सुरक्षित है। इसी '**मन्त्र-विज्ञान**' की विलक्षण देन है भगवती बगलामुखी से सम्बन्धित मन्त्र-विद्या, जिसके उपयोग से आज भी असंख्य लोग लाभ उठा रहे हैं।

आधुनिक युग में 'राष्ट्रगुरु' परम पूज्य श्री स्वामी जी एक ऐसे अद्वितीय महा-पुरुष हो गये हैं, जिन्होंने उक्त मन्त्र-विद्या के रहस्य को लोकोपकार की दृष्टि से इस प्रकार सहज रूप में उद्घाटित करने का महत् कार्य सम्पन्न कर दिखाया है कि विस्मय होता है। निस्सन्देह पूज्य श्री स्वामी जी द्वारा चुप-चाप किन्तु अति प्रभावशाली ढंग से किये गये आध्यात्मिक अनुष्ठानों की झाँकी मात्र मिलने से अनुभव होता है कि मानों आपके दिव्य स्वरूप में साक्षात् भ० सदाशिव का ही आविर्भाव हुआ हो। देश के केन्द्र मध्य-प्रदेश के '**दतिया**' नामक स्थान में विराजमान '**पीताम्बरा-पीठ**' का दर्शन कर कोई भी आस्थावान् व्यक्ति इस तथ्य को तत्काल हृदयङ्गम कर सकता है। १९६१ में वहाँ सम्पन्न 'राष्ट्र-रक्षा-अनुष्ठान' का प्रभाव आज भी दर्शकों को भावाभिभूत कर देता है। 'श्रीपीताम्बरा-पीठ' में प्रतिष्ठित भगवती श्रीबगलामुखी का दिव्य स्वरूप एवं दैवी ऊर्जा से ओत-प्रोत वहाँ का सारा वातावरण दूरस्थ भक्तों को भी अकल्पनीय ढँग से उद्बोधित करता है। 'राष्ट्र-गुरु' स्वामी जी द्वारा सङ्कलित एवं रचित '**श्रीबगलामुखी-रहस्यं**' तो अभूतपूर्व है। इस ग्रन्थ के प्रकाशन के पूर्व बहु-संख्यक भारतीय साधक अमोघ ब्रह्मास्त्र-विद्या के प्रामाणिक साधन-विधान से प्रायः सर्वथा अपरिचित थे। इस संस्कृत-ग्रन्थ के लगभग ५०० पृष्ठों में भगवती पीताम्बरा की उपासना-विषयक प्रायः सारी महत्वपूर्ण बातें उपलब्ध हैं। यही नहीं, श्रीबगला-सम्वन्धी मूल ग्रन्थ 'सांख्यायन तन्त्र' की पाण्डुलिपि पूज्य श्री स्वामी जी की ही कृपा से हमें प्राप्त हुई थी और कल्याण मन्दिर द्वारा उसका प्रकाशन सं० २०२० वि० में किया गया था। आपकी ही कृपा से 'चण्डी' के २२वें वर्ष में 'श्रोपीताम्बरा पीठ विशेषाङ्क' एवं 'श्रीबगलामुखी विशेषाङ्क' प्रकाशित किये गये थे। इनके सिवा पूज्य श्री स्वामी जी ने असीम कृपा कर

साधकोपयोगी अपनी दो कृतियाँ—'वैदिक श्रीवगला पूजा पद्धति' एवं 'श्रीबगला नित्यार्चन' भी हमें प्रकाशनार्थ प्रदान कीं।

आज प्रस्तुत 'श्रीबगला-कल्पतरु' को अध्यात्म-जगत् की सेवा में उपस्थित करते समय हमें श्रीशिव-स्वरूप स्वामी जी के निरन्तर स्नेहपूर्ण सस्मित शुभाशीर्वाद की अनुभूति हो रही है। हिन्दी भाषा में साधना-साहित्य को प्रस्तुत करने का लक्ष्य 'चण्डी' पत्रिका के प्रवर्तक 'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त शुक्ल द्वारा निर्दिष्ट है, उसी के अनुरूप यह प्रकाशन है।

'चण्डी' के पूर्वोक्त 'श्रीपीताम्बरा-पीठ-विशेषाङ्क' एवं 'श्रीबगलामुखी-विशेषाङ्क' इधर अनेक वर्षों से समाप्त हैं। उनमें जो भी उपयोगी साहित्य प्रकाशित हुआ था, उस सबको पुनः सम्पादित कर इस 'श्रीबगला-कल्पतरु' में सङ्कलित किया गया है। साथ ही, पहली बार हिन्दी में विवेचना करते हुए 'श्रीबगला मुखी-रहस्यं' और 'सांख्यायन तन्त्र' के आधार पर श्रीब्रह्मास्त्र-विद्या के रहस्यपूर्ण मन्त्रों का परिचयात्मक शोधपूर्ण नवीन निबन्ध लिखा गया है। इसके सिवा श्रीबगला के दो उपनिषदों एवं सर्वोपयोगी कुछ स्तोत्रों को प्रथम बार हिन्दी अनुवाद सहित दिया गया है। श्रीपीताम्बरा के कवच, हृदय, शतनाम एवं सहस्र-नामादि को भी मोटे अक्षरों में और यथा-सम्भव शुद्ध-रूप में इस सङ्कलन में प्रकाशित किया गया है। श्रीबगलामुखी के ध्यान-सम्मत रङ्गीन चित्र एवं अनेक रेखा-चित्रों से भी इस विशेष प्रकाशन को अलंकित किया गया है। इस प्रकार 'श्रीवगला-कल्पतरु' को अधिक-से-अधिक उपयोगी और अनूठे रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास हमने किया है।

तथापि ब्रह्मास्त्र-विद्या श्रीवगलामुखी की उपासना का विषय बड़ा ही गम्भीर एवम् रहस्यमय है। उसे सर्व-प्रबोध बनाने के लिए अभी ऐसे कितने ही ग्रन्थों का प्रकाशन वांच्छनीय है। 'श्रीबगलामुखी-रहस्यं' एवं 'सांख्यायन तन्त्र' जैसे ग्रन्थों का हिन्दी-रूपान्तर उपासकों के लिए अति आवश्यक है। श्रीजगदम्बा की दया एवम् 'राष्ट्रगुरु' पूज्य श्री स्वामीजी जैसे महा-पुरुषों के शुभाशीष से ही यह महत्कार्य पूर्ण होना संभव है। उसी की हृदय से कामना करते हुए हम पाठकों से अनुरोध करते हैं कि 'श्रीवगला-कल्पतरु' को कृपया ध्यान से पढ़ें, आवश्यक ज्ञान प्राप्त करें और अपने गुरुदेव के निर्देशानुसार साधना कर अभीष्ट को प्राप्त करें। शुभमस्तु।

श्रावण पूर्णिमा २०४०, प्रयाग

—'कुलभूषण'

श्रीबगला भगवती का पूजन-यन्त्र
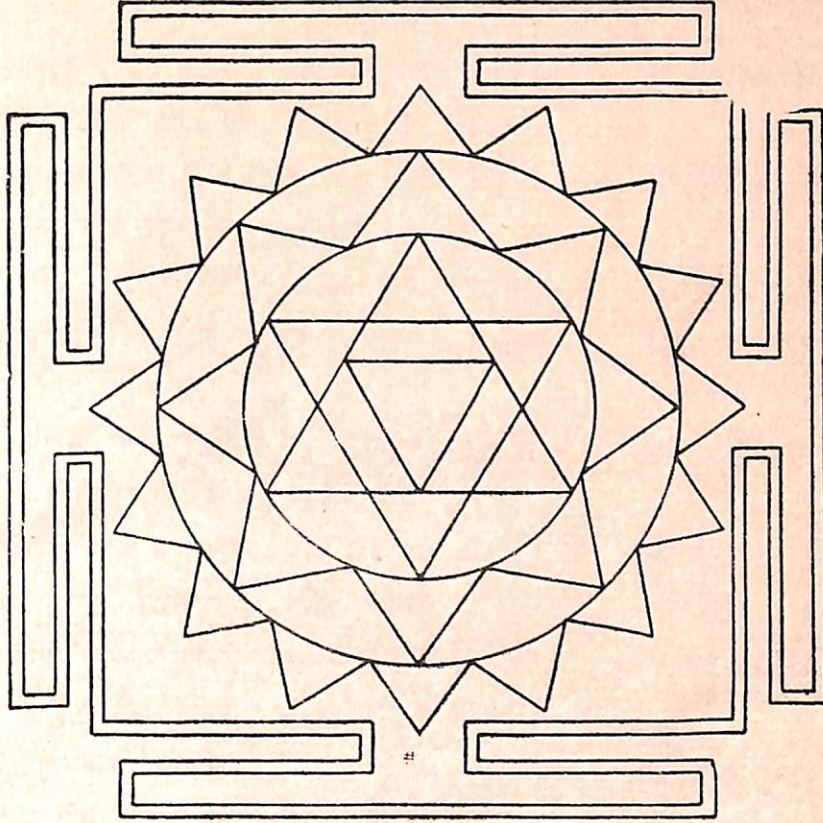
मध्ये योनि समालिख्य तद्-बाह्ये तु षडस्रकम् ।

तद्-बाह्येऽष्ट-दलं पद्मं तद्-बाह्ये षोडशच्छदम् ॥

चतुरस्र-त्रयं बाह्ये चतुर्द्वारोप-शोभितम् ।
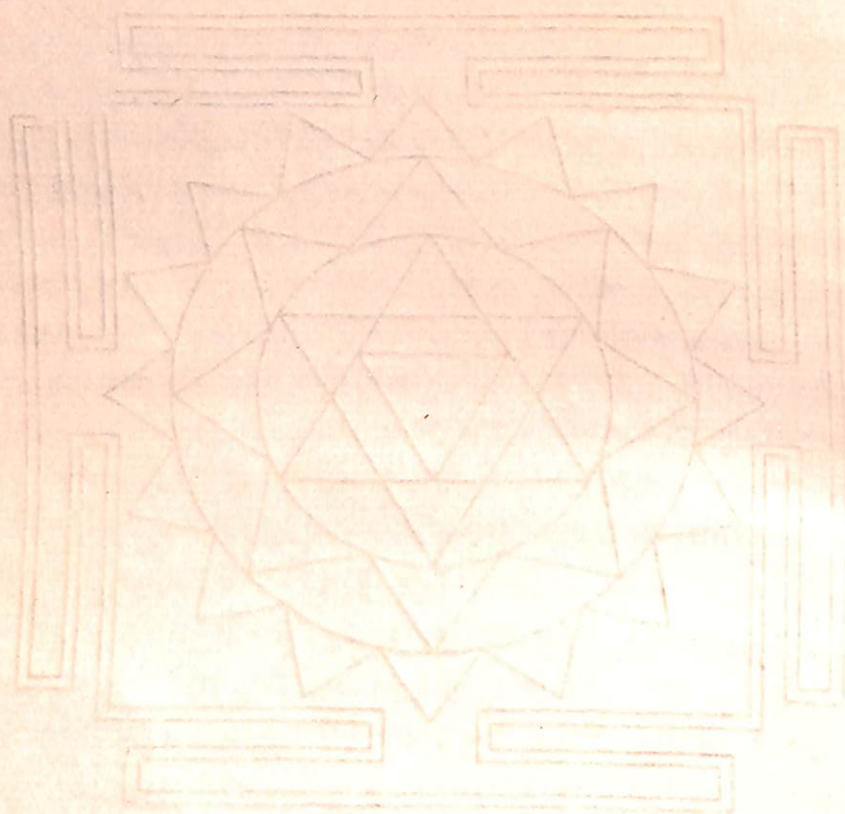
गुप्तावतार पूज्य बाबा श्री

पीताम्बरि रवि कोटि, ज्योति परा माया, मा ज्योति परा माया।
बक-मुख ज्योति महा-मुख, बहु कर पर छाया॥
वर कर अष्टादश भुज, शत भुज शत काया, मा शत भुज शत काया।
द्विभुज चतुर्भुज बहु-भुज, भुज-मय जग माया॥
जय देवि, जय देवि, मणि मण्डप वेदी, मा मणिपुर मणि-वेदी।
चिन्तामणि सिंहासन, चिन्तामणि सिंहासन, सुर तरु-वर वेदी।
जय देवि, जय देवि॥ १

तीन नयन रवि-शशि-वसु, इन्दीवर-दल से, मा इन्दीवर-दल से।
खचिता कर्ण हरण छवि, खंजन-मृग छल से।
अत्याकृति छवि पर छवि, भय हर भय कर से, मा भय कर भय पर से।
मोहन मुक्ति विधायन, कोर कृपा परसे। जय देवि, जय देवि॥ २
मुकुट महा मणि शशि-पर, कच विलिखित मोती, मा कच विलिखित मोती।
नखत जटित बेंदी सिर, भाल भरित जोती।
नक-बेसर तर लटकत, गज मुक्ता मोती, मा गज मुक्ता मोती।
जन भव भय वारत नित, पुण्य सदन स्रोती। जय देवि, जय देवि॥ ३
चिबुक अधर बिम्बाधर, दाड़िम दन्त-कली, मा दाड़िम दन्त-कली।
रस-मय गन्ध सुमन पर, श्वासन्ह प्रति निकली।
करण अतीव मनोहर, ताटङ्कित घुंघुरी, मा ताटंकित घुंघुरी।
रत्नादिक सुर सम हिल, सुर पर मधु सुर री। जय देवि, जय देवि॥ ४
मदन महा छवि रति छवि, छवि पर छवि शोभा, मा छवि पर मुख शोभा।
मदन-दहन मन-मोहनि, रूप अवधि ओभा।
मणिपुर अमरित सर वर, कम्बु छटा ग्रीवा, मा कम्बु छटा ग्रीवा।
रूप सुधा सर रस कर, सार सुमुख ग्रीवा। जय देवि, जय देवि॥ ५
सुर तरु कुसुम सफल तर, बगल भुजग दोनों, मा बगल भुजग दोनों।
लटकत फण नीचे कर, भुज कर मणि दोनों।

फणि मणि भुज कर कंकण, रत्न जटित ज्योती, मां रत्न जटित ज्योती ।
भुवन भुवन निज जन मन, पथ दर्शन स्रोती । जय देवि, जय देवि ।।६
मध्य महा द्युति द्योतित, कैलाशो मेरुः, मां कैलाशो मेरुः ।
तेज महा तप सुर मुनि, रक्त शिखर गेरू ।
सत-लर गज-मुक्ता कर द्वय गिरि बिच गङ्गा, मां द्वय गिरि बिच गङ्गा ।
तारन भक्त उधारन, पय सुख मुख सङ्गा । जय देवि, जय देवि ।।७
नाभि गँभीर विशोधन, यन्त्र-कला कलसी, मां यन्त्र-कला कलसी ।
कज्जल गिरि कल्मष मन, जन फट कट मलसी,
सोमल रोमावलि मिस, छटक बिखर दीखे, मां छटक बिखर दीखे ।
मणिपुर तेज बनत मणि, पारस गुण सीखे । जय देवि, जय देवि ।।८
बिन्दु त्रिकोण निवासिनि, शक्ति जगज्जननी, मां शक्ति जगज्जननी ।
जंघोरू-धर पोषिणि, पद निज जन तरिणी ।।
माया बोज विलासिनि, प्रणवार्चित रमिणी, मां प्रणवार्चित रमिणी ।
अनघ अमोघ महा-शिव, सह शिर मोति मणी । जय देवि, जय देवि ।।९
त्र्यस्त्र षडस्त्र सु - वृतं, चाष्ट - दलं पद्मं, मां चाष्टदलं पद्मं ।
भूपुर पुर-मणि दल मणि, चिन्तामणि पद्मं ।
पीयूषोदधि बिच रुच, शुच पद्मं रक्तं, मां शुच पद्मं रक्तं ।
सिंहासन प्रेतासन, मणि पर मणि मुक्तं । जय देवि, जय देवि ।।१०
कामिक कर्म स्वजन पन-पालिनि पर विद्या, मां पालिनि पर विद्या ।
सिद्धा सिद्धि सनातनि, सिद्धि - प्रदा विद्या ।
सिद्धि - सदनि सिद्धीश्वरि, सिद्धेश्वरि सरमा, मां सिद्धेश्वरि सरमा ।
मुक्त विलासिनि 'मोती', मुक्ति-प्रदा परमा । जय देवि, जय देवि ।
मणि मण्डप वेदी, मा मणिपुर मणि-वेदी ।
चिन्तामणि सिंहासन, चिन्तामणि सिंहासन, सुर-तरु वर वेदी ।
जय देवि, जय देवि ।। ११

श्रीबगला-ज्ञातव्य पट

१ **नाम**—पीताम्बरा, बगला या बगलामुखी, ब्रह्मास्त्र-विद्या ।

२ **आम्नाय**—इस विद्या के दो आम्नाय हैं : उत्तराम्नाय और दक्षिणाम्नाय ।

३ **कुल**—यह 'श्री-कुल' की विद्या है ।

४ **आचार**—इसका आचार वाम है, दक्षिण भी है । दोनों आचार हैं ।

५ **विद्या**—'दिवा दक्षिण-साध्याऽपि, निशि वाम-प्रसादना ।' यह 'विद्या' ही कही है ।

६ **शिव**—इस विद्या के शिव 'त्र्यम्बक' हैं ।

७ **गणेश**—इस विद्या के गणेश 'हरिद्रा गणपति' हैं ।

८ **भैरव**—इसके भैरव 'आनन्दभैरव' हैं । कोई-कोई 'मृत्युञ्जय शिव' को इसका भैरव कहते हैं । वे इस प्रमाण से कहते हैं कि दश विद्याओं में जो शिव हैं, वही भैरव भी हैं ।

९ **यक्षिणी**—इस विद्या के साथ साधना-योग्य यक्षिणी 'विडालिका' नाम की है ।

१० **अङ्ग-विद्या**—मृत्युञ्जय मन्त्र, बटुक-मन्त्र, पञ्चास्त्र (१ आग्नेय, २ वारुण, ३ पर्जन्य, ४ सम्मोहन, ५ पाशुपत), कुल्लुका, तारा, स्वप्नेश्वरी और योगिनी मन्त्र—ये इसकी अङ्ग- विद्यायें हैं ।

११ **कुल्लुका**—इस विद्या की कुल्लुका 'ॐ हूं क्ष्रौं' यह त्र्यक्षर मन्त्र है । इस मन्त्र को शिर पर १० बार जपना चाहिए ।

१२ **सेतु**—इस विद्या का सेतु मन्त्र ' ह्रीं स्वाहा' है । इसे कण्ठ पर १० बार जपते हैं ।

१३ **महा-सेतु**—इसका महासेतु मन्त्र 'स्त्रीं' यह एकाक्षर है । इसे हृदय में जपते हैं १० बार ।

१४ **निर्वाण**—इस विद्या की मातृका 'ह्लूं ह्रीं श्रीं' सम्पुटित मूल जप ही इसकी निर्वाण विद्या है । पुरश्चरण व पर्वादि विशेष अवसर पर हीं इसे करना है, नित्य नहीं ।

१५ **दीपन**—इसके दीपन के लिये मूल-मन्त्र को योनि-बीज से पुटित कर ७ बार जपे । योनि-बीज 'ईं' है । यह भी नित्य नहीं, पुरश्चरणादि में या पर्वादि में ही करे ।

१६ **जीवन**—मूल-मन्त्र के अन्त में 'ह्रीं ओं स्वाहा' १० बार जपे । यह भी नित्य नहीं ।

१७ **मुख-शोधन**—त्र्यक्षरी 'ऐं ह्रीं ऐं' से नित्य प्रातः मुख-शोधन करे । दातून करने के बाद अपनी जिह्वा पर अनामिका से जल-संकेत से इसे लिख कर १० बार जपे ।

१८ **शापोद्धार**—'ॐ ह्लीं बगले रुद्र-शापं विमोचय विमोचय ॐ ह्लीं स्वाहा' मन्त्र के पूर्व १० बार जपे । यह प्रयोग पुरश्चरणादि में, विशेषावसर पर ही करे, नित्य न करे ।

१९ **उत्कीलन**—'ॐ ह्रीं स्वाहा' इस चतुरक्षरी को मन्त्र के आदि में १० बार जपे । यह भी पुरश्चर्यादि में और पर्वादि विशेषावसर पर ही कर्तव्य है ।

२० **भाव**—इस विद्या की साधना में 'वीर-भाव' और 'दिव्य-भाव' दो भाव हैं । आदि में वीर-भाव ही से चले । फिर क्रम से तुरीयाश्रम तक दिव्य-भाव प्राप्त हो जाता है ।

२१ **क्रम**—इस विद्या का साधन सौभाग्य-क्रम से सम्पन्न हो, तभी सर्व-सिद्धि-प्रद होता है । अर्थात् शक्ति-साधना, सौभाग्य-पूजादि 'शक्ति-सङ्गम' या 'कुलार्णव' तन्त्रोक्त करे ।

—'आगम-रत्न' पण्डित-प्रवर श्री हरिशास्त्री दाधीच

श्री बगला-ध्यानावली

पीत-पीत वसन प्रसार करैं देह-छवि,
अङ्ग-अङ्ग भूषन सु-पीत झरि लावै हैं।
मुख-कान्ति पीत-पीत, तीनों नेत्र पीत-पीत,
अङ्ग-राग पीत-पीत शोभा सरसावै है॥
निज भीत भक्तन को जीत देति दौरि आय,
अपनी दया को रूप प्रकट दिखावै है।
बगला तिहार नाम जपत स-भक्ति जौन,
भुक्ति पावै मुक्ति पावै, पीता बन जावै है॥ १॥

पीले-पीले वसन हैं भूषन हू पीले-पीले,
सुमुखी विचित्र रूप आपनो दिखायो है।
झपटि गही है जीभ निज भक्त-शत्रु कर,
मारिबे को ताहि वेगि मुद्‌गर उठायो है॥
थकित कियो है ताहि बार-बार त्रस्त करि,
बोलि न सकत वह, ऐस डर पायो है।
बगला तिहारो देखि अद्‌भुत स्वरूप यह,
साधक प्रसन्न मन तोर यश गायो है॥

कोऊ जपैं ह्लीम ह्लीम द्वि-भुज विलोकि रूप,
कोऊ जपै हरीं ध्याय चार भुज-धारिणी।
ह्लरीम कोऊ जपै हिय लाय दिव्य रूप,
पावत प्रमोद भूरि भक्ति अनपायिनी॥
बगला भवानी तोरि विशद कहानी जग,
जानि-जानि रीझै तो पै तू ही मन-भाविनी।
भक्तन को खोजि-खोजि उर लाय हरै पीर,
अम्बिका तिहारी दया भुक्ति-मुक्ति-दायिनी॥

—'कौल-कल्पतरु' पण्डित देवीदत्त शुक्ल

सिद्धि-प्रदा श्रीबगलामुखी

'राष्ट्र-गुरु' अनन्त-श्री स्वामी जी महाराज

काञ्चन - पीठ - निविष्टां सादर - मुनिवर - वर्णित - प्रभावाम् ।
करुणा - पूरित - नयनां श्रीबगलां पीताम्बरां वन्दे ॥

परम करुणामयी श्री जगन्माता ने देवताओं की स्नेह-पूर्ण प्रार्थना से द्रवीभूत होकर यह प्रतिज्ञा की है कि—

'जब जब हमारे भक्त असुरों से पीड़ित होंगे, तब तब मैं अवतार धारण करके असुरों का विनाश कर उन्हें सुखी करूँगी' (स० श० ११-५५)।

सारे विश्व में ऐसा कोई भी स्थान नहीं है, जहाँ किसी-न-किसी रूप में माता की पूजा न होती हो। ये सारे रूप उक्त प्रतिज्ञा की स्मृति के ही सूचक हैं। इनके साथ एक महत्वपूर्ण इतिहास का होना भी अनिवार्य है। तथापि काल की कुटिल गति के प्रभाव से हमारी दृष्टि से वह तिरोहित है। देवी-भागवतादि पुराण ग्रन्थों में जो कुछ इस विषय के इतिहास उपलब्ध हैं, वे इस महान् संस्मरण के बहुत अल्प ही निदर्शन हैं। अनेक रहस्य अभी तक छिपे हुये हैं। श्रीजगदम्बा की शुभ प्रेरणा से ही वे प्रकट हो सकते हैं।

शक्ति-उपासना में इस समय काली, तारा और षोडशी विद्या के ही रूप ध्येय, ज्ञेय रूप से विशेषतः प्रचार में हैं। अन्य महा-विद्याओं के विषय में बहुत कम ही प्रकाश हुआ है। श्री बगलामुखी महा-विद्या के विषय में वेद एवं तन्त्र-ग्रन्थों में जो कुछ कहा गया है, उसी पर यहाँ कुछ विचार करते हैं, जिससे इस विद्या का रहस्य पाठकों को व्यक्त होगा।

स्वतन्त्र तन्त्र में कहा गया है—

अथ वक्ष्यामि देवेशि ! बगलोत्पत्ति-कारणम् । पुरा कृत-युगे देवि ! वात-क्षोभ उपस्थिते ॥
चराचर-विनाशाय विष्णुश्चिन्ता-परायणः । तपस्यया च संतुष्टा महा-त्रिपुरसुन्दरी ॥
हरिद्राख्यं सरो दृष्ट्वा जल-क्रीडा-परायणा । महा-पीत-ह्रदस्यान्ते सौराष्ट्रे बगलाम्बिका ॥
श्रीविद्या-सम्भवं तेजो विजृम्भति इतस्ततः । चतुर्दशी भौम-युता मकारेण समन्विता ॥
कुल-ऋक्ष-समायुक्ता वीर-रात्रिः प्रकीर्तिता । तस्यामेवार्ध-रात्रौ तु पीत-ह्रद-निवासिनी ॥
ब्रह्मास्त्र-विद्या संजाता त्रैलोक्य-स्तम्भिनी । तत्-तेजो विष्णुजं तेजो विद्यानुविद्ययोर्गतम् ॥

अर्थात् श्री शङ्कर जी पार्वती से कहते हैं कि 'हे देवि ! श्रीबगला विद्या के आविर्भाव को कहता हूँ। पहले कृत-युग में सारे जगत् का नाश करनेवाला वात-क्षोभ (तूफान) उपस्थित हुआ। उसे देखकर जगत् की रक्षा में नियुक्त भगवान् विष्णु चिन्ता-परायण हुये। उन्होंने सौराष्ट्र देश में हरिद्रा सरोवर के समीप तपस्या कर श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी भगवती को प्रसन्न किया। श्रीविद्या ने ही बगला-रूप से प्रकट होकर समस्त तूफान को निवृत्त किया। त्रैलोक्य-स्तम्भिनी ब्रह्मास्त्र-महाविद्या श्रीविद्या एवं वैष्णव तेज से युक्त

हुई। मङ्गलवार-युक्त चतुर्दशी, मकार, कुल-नक्षत्रों से युक्त वीर-रात्रि कही जाती है। इसी को अर्ध-रात्रि में श्रीबगला का आविर्भाव हुआ था।'

उक्त कथानक के अनुकूल कृष्ण-यजुर्वेद की काठक-संहिता में दो मन्त्र आये हैं, जिनसे इस विद्या का वैदिक रूप प्रकट होता है—

विराड्-दिशा विष्णु-पत्न्यघोरास्येशाना सहसो या मनोता। विश्व-व्यचा इषयन्ती सुभूता शिवा नो अस्तु अदितिरुपस्थे। विष्टम्भो दिवो धरुणः पृथिव्या अस्येशाना सहसो विष्णु-पत्नी। बृहस्पतिर्मातारश्वोत वायुस्संध्वाना वाता अभितो गृणन्तु। (का० सं०, २२ स्थानक, १, २ अनु० ४६, ५०)

अर्थ—'विराट् दिशा' दशों दिशाओं को प्रकाशित करनेवाली, 'अघोरा' सुन्दर स्वरूपवाली, 'विष्णु-पत्नी' विष्णु की रक्षा करनेवाली वैष्णवी महा-शक्ति, 'अस्य' त्रिलोक जगत् की 'ईशाना' ईश्वरी तथा 'सहसः' महान् बल को धारण करनेवाली जो 'मनोता' कही जाती है। 'मनोता' का विवेचन ऐसा किया गया है—

वाग्वै देवानां मनोता तस्यां हि तेषां मनांसि ओतानि, अग्निर्वै देवानां मनोता तस्मिन् हि तेषां मनांसि ओतानि। गौर्हि देवानां मनोता तस्यां हि तेषां मनांसि ओतानि (ऐ० ब्रा० २, १०)

अर्थात् देवताओं का मनस्तत्व वाक्, अग्नि और गौ में ओत-प्रोत है। अतः इन तीनों शक्तियों के समुदाय को 'मनोता' कहते हैं। 'विश्वव्यचा' अन्तरिक्ष लोक-स्वरूप समस्त नक्षत्र-मण्डल में प्रकाशित होनेवाली, 'अन्तरिक्षं विश्वव्यचाः' तै० ३-२-३७, 'इषयन्ती' समस्त जगत् को प्रेरित करनेवाली इच्छा-शक्ति-रूपा, 'सुभूता' आनन्दार्थ अनेक रूपों में आविर्भूत होनेवाली, 'अदितिः' अविनाशी-स्वरूप देव-माता, 'उपस्थे' हम उपासकों के समीप, 'शिवा' कल्याण-स्वरूपवाली, 'अस्तु' हो। 'दिवः विष्टम्भः' जो दिव-लोक का स्तम्भन करनेवाली है। मन्त्र में आया हुआ 'विष्टम्भः' पद स्तम्भन-तत्व को बता रहा है। 'धरुणः पृथिव्याः' पृथिवी तत्व की जो प्रतिष्ठा है—'प्रतिष्ठा वै धरुणम्' श० ७-४-२-५। श्रीबगला माता का बीज पार्थिव है—'बीजं स्मेरत् पार्थिवम्' तथा बीज-कोश में इसे ही प्रतिष्ठा कला भी कहते हैं। 'अस्य सहसः ईशाना' सारे जगत् पर जिसका शासन है, वह 'विष्णु-पत्नी'—विष्णु की रक्षा करनेवाली, बृहस्पति, मातरिश्वा और वायु-रूपवाली, 'संध्वाना' शब्द-तत्व का कारण, 'वाता' वात-क्षोभ को शान्त करनेवाली, 'अभितो गृणन्तु' हमें उभय-लोक में भुक्ति एवं मुक्ति प्रदान करे। 'स्वर्गापवर्ग-प्रदे' इस वचन से सिद्ध होता है।

स्वतन्त्र तन्त्र में उल्लिखित कथा से इन दोनों मन्त्रों में कथित तत्व अभिन्न ही सिद्ध हो रहा है।

स्तम्भन-शक्ति का स्वरूप

नाम-रूप से व्यक्त एवं अव्यक्त सभी पदार्थों की स्थिति का आधार स्तम्भन-शक्ति है। इसी अभिप्राय में कहा है—

'आधार-भूता जगतस्त्वमेका मही-स्वरूपेण यतः स्थितासि' (सप्तशती)

वेद एवं वेदान्त शास्त्र में इसे ही ब्रह्म-तत्व कहा गया है—

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तंभितं येन नाकः। (य० वे० ३२-६)

अर्थात् उस परम तत्व स्तम्भन-शक्ति से ही द्यौ-लोक वृष्टि प्रदान करता है; उसी से आदित्य-मण्डल स्तम्भित है; उसी से स्वर्ग-लोक भी ठहरा हुआ है। इस मन्त्र में स्तम्भन-शक्ति का स्वरूप एवं उपयोग बताया गया है। बृहदारण्यक के अक्षर ब्राह्मण में इसी की व्याख्या विस्तार से की गई है—

'स होवाचैतद्वै तदक्षरं गार्गि ! ब्राह्मणा अभिवदन्ति ''एतस्याक्षरस्य प्रशासने गार्गि ! सूर्या-चन्द्रमसौ विधृतौ तिष्ठतः''' द्यावा-पृथिव्यौ विधृते तिष्ठतः' (बृ० ४-८-८-९)।

अर्थात् 'हे गार्गि ! इसी अक्षर-तत्व को ब्राह्मण ब्रह्म-वेत्ता योगी अक्षर कहते हैं। इसी से सूर्य, चन्द्र, द्यौ, पृथिवी आदि समस्त लोक अपनी-अपनी मर्यादा में ठहरे हुये हैं।' वेदान्त के 'अक्षराम्बरान्त-धृतेः' तथा 'सा च प्रशासनात्' (वे० द० १-३-१०, ११) इन दोनों सूत्रों में इसी को मीमांसा की गई है। स्त्री-लिङ्ग का प्रयोग होने से परम तत्व शक्ति-रूपवाला है, यह स्पष्ट हो जाता है। 'विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्', इस श्लोक में 'विष्टभ्य' पद से भगवान् श्रीकृष्ण ने उक्त तत्त्व का ही समर्थन किया है। इस प्रकार श्रुति-स्मृति के प्रमाणों द्वारा स्तम्भन-शक्ति का स्वरूप ज्ञात होता है। वही विष्णु-पत्नी सारे जगत् का अधिष्ठान ब्रह्म-स्वरूपवाली है। इसे ही तन्त्र में श्री बगला महाविद्या कहा गया है।

इसके इस व्यापक स्वरूप के ज्ञान से साधक अविद्या से मुक्त होकर मुक्ति लाभ करता है। महाविद्या नाम की चरितार्थता इसी से होती है। दूसरा स्वरूप कर्म-मार्ग का है। जगन्माता को ज्ञान और क्रिया इन दोनों शक्तियों का आश्रय कर श्रेय एवं प्रेय इन दोनों धर्मों का निरूपण आर्य-शास्त्रों में किया गया है। यतोऽभ्युदय-निश्रेयस्-सिद्धिः स धर्मः'—इस प्रसिद्ध कणाद सूत्र में कहा है। उक्त ज्ञान-स्वरूप मुमुक्षु साधकों के लिये माना जाता है। दूसरा कर्मकाण्ड ऐहिक सुखों के लिये उपयुक्त होता है। इसके तीन स्वरूप हैं—शान्तिक, पौष्टिक और आभिचारिक। दैवी प्रकोप से उत्पन्न नाना प्रकार की आधि-व्याधियों के शमन के लिये शान्ति-कर्म का उपयोग होता है। 'धन-जनानां वर्धनं पुष्टिः'—धन, जन आदि लौकिक उपयोगी वस्तुओं की वृद्धि के लिये पौष्टिक कर्मों का अनुष्ठान होता है और शत्रुओं के निग्रह के लिये आभिचारिक कर्मों का विधान है।

इन तीनों प्रकार के कर्मों का अनुष्ठान स्तम्भन-महाशक्ति के रूप से होता है। स्वतन्त्र तन्त्र में शान्ति-कर्म का उपयोग बताया गया है। आधि-व्याधि का निरोध स्तम्भन का प्रधान कार्य है। जिस तरह धातुओं की न्यूनता से रोगी की शारीरिक क्षीणता होकर दुर्बलता होती जाती है, उस अवस्था में आयुर्वेदज्ञ वैद्य क्षीणता की स्तम्भक औषधों को देकर रोगी को पुष्ट करने के लिये पौष्टिक उपचार कर उसे बलिष्ठ बना देते हैं, इसी प्रकार दारिद्रय-ग्रस्त मनुष्यों को पौष्टिक कर्मों द्वारा धन-जन की वृद्धि करने में स्तम्भन-शक्ति का उपयोग होता है। इसका निरूपण वैदिक, तान्त्रिक दोनों धर्मों में विस्तार के साथ किया गया है। मारण, मोहनादि आभिचारिक कर्मों में तो स्तम्भन का साम्राज्य ही है। श्रीबगलामुखी का प्रसिद्ध तन्त्र-ग्रन्थ 'सांख्यायन' इससे भरा हुआ है। क्रमशः ये तीनों कर्म सात्विक, राजस और तामस कहे जाते हैं।

इन आभिचारिक प्रसङ्गों में श्रीबगला विद्या की प्रधानता होने से बहुत से लोग इन्हें केवल तामसिक शक्ति कहते हैं। कामधेनु-तन्त्र में तामस प्रकरण में ही इनकी गणना की गई है और 'कल्याण' के शक्ति-अङ्क के 'दश महाविद्या' शीर्षक लेख में पं० मोतीलाल शर्मा ने शत्रु-निरोध में ही इस विद्या का उपयोग लिखा है परन्तु यह बात एक-देशीय है, प्रधानता के अभिप्राय में ही है, वास्तविक रूप से नहीं। शक्ति-सङ्गम तन्त्र (ताराखण्ड) में तो त्रि-शक्ति रूप में ही श्रीबगला को माना है—

'सत्ये काली च श्रीविद्या कमला भुवनेश्वरी। सिद्ध-विद्या महेशानि ! त्रिशक्तिर्बगला शिवे ॥

अतः श्रीबगला माता को केवल तामस मानना ठीक नहीं है। आभिचारिक कृत्यों में भी रक्षा की ही प्रधानता होती है। यह कार्य इसी शक्ति द्वारा निष्पन्न होता है। इसीलिये इसके बीज की एक संज्ञा रक्षा-बीज भी है (मन्त्र-योग-संहिता)—

'शिव-भूमि-युतं शक्ति-नाद-बिन्दु-समन्वितम् । बीजं रक्षा-मयं प्रोक्तं मुनिभिर्ब्रह्म-वादिभिः।'

यजुर्वेद के प्रसिद्ध आभिचारिक प्रकरण में अभिचार-स्वरूप की निवृत्ति में इसी शक्ति का विनियोग किया गया है। इस प्रकरण का यजुर्वेद की सभी संहिताओं (तैत्तरीय, मैत्रायणी, काक, काठक, माध्यंदिनि, काण्व) में समान-रूप से पाठ आया है। माध्यंदिनि संहिता के भाष्यकर्त्ता उव्वट, महीधर भाष्यकारों ने जैसा अर्थ इसका लिया है, उसका सार यहाँ देते हैं । पं० ज्वालाप्रसाद कृत मिश्र भाष्य में इसका हिन्दी अनुवाद भी दिया गया है ।

आभिचारिक प्रकरण

शुक्ल यजुर्वेद माध्यंदिनि संहिता के पाँचवें अध्याय की २३,२४, २५ वीं कण्डिकाओं में अभिचार-कर्म की निवृत्ति में श्रीबगला महाशक्ति का वर्णन इस प्रकार आया है—'रक्षोहणं वलग-हनं वैष्णवीमिदमहं तं वगलमुत्किरामि' (य० ५, अ० २३) अर्थात् 'राक्षसों द्वारा किये गये अभिचार की निवृत्ति के लिये वैष्णवी महाशक्ति को प्रतिपादन करनेवाली महावाणी को इन्द्र से कहो' इत्यादि प्रसङ्ग में बगलामुखी विद्या का स्वरूप वेद ने परम-रहस्य रूप से बताया है। वेद में तन्त्रशास्त्र-प्रसिद्ध बगला-पद 'वलगा' इस व्यत्यय नाम से कहा जाता है। इसका अर्थ उव्वट ने ऐसा किया है—

'वलगान् कृत्या-विशेषान् भूमौ निखनितान् शत्रुर्भिविनाशार्थं हन्तीति वलगहा तां वलग-हनम्' (उव्वट भाष्य)

अर्थात् 'शत्रु के विनाश के लिये कृत्या-विशेष भूमि में जो गाड़ देते हैं, उन्हें नाश करनेवाली वैष्णवी महाशक्ति को वलगहा कहते हैं।' यही अर्थ वगलामुखी का भी है।

'खनु अवदारणे' इस धातु से 'मुख' शब्द बनता है, जिसका अर्थ मुख में गये पदार्थ का चर्वण या विनाश ही अभिप्रेत होता है। इस प्रकार शत्रुओं द्वारा किये हुये अभिचार को नष्ट करनेवाली महाशक्ति का नाम बगलामुखी चरितार्थ होता है। श्रीमहीधर ने इसका स्पष्ट अर्थ ऐसा किया है—

'पराजयं प्राप्य पलायमानै राक्षसैरिन्द्रादि-वधार्थमभिचार-रूपेण भूमौ निखाता अस्थि-केश-नखादि-पदार्थाः कृत्या-विशेषा वलगाः ।'

अर्थात् 'इन्द्रादि देवताओं द्वारा पराजित होकर भागे हुये राक्षसों ने देवताओं के बध के लिये अस्थि, केश, नखादि पदार्थों के द्वारा अभिचार किया। तैत्तरीय ब्राह्मण में भी कहा है—'असुरा वै निर्यन्तो देवानां प्राणेषु वलगान् न्यखनन्' अर्थात् देवताओं को मारने के लिये असुरों ने अभिचार किया। शतपथ ब्राह्मण (३-४-३) में भी इसे इस प्रकार बताया है—

'यदा वै कृत्यामुत्खनन्ति अथ सालसामोघाभिभवति तथा एवैष एतद्-यस्मा अत्र कश्चित् द्विषन् भ्रातृव्यः कृत्यां वलगान् निखनति तानेवैतदुत्किरति ।'

उक्त ही अर्थ इस वचन का भी है। 'वलगा' का अर्थ महीधर ने इस प्रकार किया है—'यस्य बधार्थं क्रियते तं वृण्वन्नाच्छादयन् गच्छतीति वलगः' (महीधर भाष्य) अर्थात् 'जिसके वध के लिये कृत्या का प्रयोग किया जाता है, उसे गुप्त रीति से मार देता है।' इसीलिये महर्षि यास्क ने 'वलगो वृणौतः' (नि० ६) 'वृञ् आच्छादने' धातु से बनाया है। 'वलगान्' इसी द्वितीयान्त पद के अनुकरण से बगला यह तान्त्रिक नाम निष्पन्न हुआ है। भगवती के 'बगलामुखी' इस संज्ञा नाम की सिद्धि पर वैयाकरण लोग आपत्ति करते हैं कि यह नाम अशुद्ध है क्योंकि 'नख-मुखात् संज्ञायाम्' इस सूत्र से 'ङीष्' प्रत्यय का निषेध

होकर आ-प्रत्यय होकर 'बगलामुखा' ही नाम शुद्ध है परन्तु 'स्वाङ्गाच्चोपसर्जनादसंयोगोपधात्' इस सूत्राधिकार से उक्त सूत्र की प्रवृत्ति होती है। यहां 'मुखो' शब्द स्वाङ्ग-वाची नहीं है। बगला के निःसारण में ही 'मुख' शब्द का प्रयोग है। 'मुखं निःसरणम् इत्यमरः' तथा 'मुखमुपाये प्रारम्भे श्रेष्ठे निःसरणास्ययोः इति हैमः'। उपाय, प्रारम्भ, श्रेष्ठ, निःसरण और मुख के अर्थ में ही 'मुख' शब्द का प्रयोग होता है। अतः उक्त सूत्र की यहाँ प्राप्ति ही नहीं है। ज्वालामुखी, सूर्यमुखी, गौमुखी शब्दों की तरह यह शब्द भी सिद्ध ही है।

यह शक्ति वैष्णवी है। यह प्रकरण से भी सिद्ध है क्योंकि इस प्रकरण के पूर्व वैष्णव सूक्त का प्रसङ्ग है। अथर्ववेद में इस वलगा का प्रसङ्ग अनेक स्थानों पर आया है। उनमें से एक 'वलगा-सूक्त' का पाठ यहाँ देते हैं जिसके विषय में अथर्ववेदी विद्वानों की ऐसी सम्मति है कि इसके पाठ से कृत्या का निवारण शीघ्र ही हो जाता है। इस सूक्त (अथर्व ५ का. ६ अनु.) में अनेक प्रकार कृत्या के दिये हुये हैं—

बगला सूक्त

यां ते चक्रुः रामे पात्रे यां चक्रुर्मिश्र-धान्यके, आमे मांसे कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति-हरामि तां ॥
यां ते चक्रुः वृक-वाकाः वजे वा यां कुरीरिणि। अव्यां ते कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति-हरामि तां
यां ते चक्रुः एक-शफे पशूनामुभयादति। गर्दभे कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति-हरामि ताम् ॥
यां ते चक्रुरमूलायां वलगं वानराच्याम्। क्षेत्रे ते कृत्यां चक्रुः पुनः प्रति-हरामि ताम् ॥
यां ते चक्रुर्गार्हपत्ये पूर्वाग्नावुत दुश्चितः। शालायां कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति-हरामि ताम् ॥
यां ते चक्रुः सभायां यां चक्रुरधि-देवने। अक्षेषु कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति-हरामि ताम् ॥
यां ते चक्रुः सेनायां यां चक्रुरिष्वायुधे। दुन्दुभौ कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति-हरामि ताम् ॥
यां ते कृत्यां कूपे बद्धुः श्मशाने वा निचखुः। सद्मनि कृत्यां यां चक्रुः पुनः प्रति-हरामि ताम् ॥
यां ते चक्रुः पुरुषस्यास्थे अग्नौ सङ्कु-सुके च याम्। म्रोकं निर्दाहं क्रव्यादं पुनः प्रति-हरामि तां ॥
अप थैनाज भारैणां तां पथेतः प्रहिण्मसि। अधीरो मयी धीरेभ्यः सञ्जभारा चित्या ॥
यश्चकार न शशाक कर्तुं शश्ने पादमंगुरिम्। चकार भद्रमस्मभ्यमभगो भगवद्भ्यः ॥
कृत्या कृतं वलगिनं शपथेऽध्यम्। इन्द्रस्तं हन्तु महता बधेनाग्निर्विध्यत्वस्तया ॥

सूक्त का अर्थ सरल है। अतः इसके अनुवाद करने की आवश्यकता नहीं है। इसके विषय में एक अनुभवी विद्वान् का कहना है कि कृत्या के निवारण में यह सूक्त अपूर्व शक्ति रखता है। केवल एकादश पाठ ही पर्याप्त हैं।

इसके अतिरिक्त 'श्री ललिता-सहस्रनाम' के माहात्म्य में—

'यो वाभिचारं कुरुते नाम-सहस्र-पाठके। निवर्त्य तत् क्रियां हन्यात् तं व प्रत्यङ्गिरा स्वयम् ॥२६८॥

इस श्लोक का भाष्य इस प्रकार किया गया है—

'अभिचारं अदृष्ट-द्वारक वैरि-मारण-साधन-क्रियां श्येन-यागादि-रूपां निवर्त्य पराकृत्य पराङ्मुखीकृत्येति यावत् प्रत्यङ्गिरा अथर्वण भद्रकाली देवता अथर्वण वेद-मन्त्र-काण्डे शौनक-शाखाया द्वात्रिंशदृचः।'

अर्थात् श्रीललिता-सहस्रनाम-पाठी के ऊपर जो कोई अभिचार करता है, उसे प्रत्यङ्गिरा शक्ति स्वयं उसकी क्रिया को लौटाकर मार देती है। अदृष्ट द्वारा शत्रु के मारण की क्रिया को अभिचार कहते हैं। शौनक शाखा के उक्त स्थल पर ये मन्त्र आये हैं। इन मन्त्रों में 'वलग' शब्द भी आया है तथा 'प्रत्यङ्गिरस्' शब्द एक मन्त्र में आने से इसे 'प्रत्यङ्गिरा' नाम दिया गया है। इस प्रत्यङ्गिरा शक्ति का इस विषय में बड़ा माहात्म्य है। इसके अनेक स्तोत्र-मन्त्र भी उपलब्ध होते हैं। 'श्री काली नित्यार्चन' में एक प्रभावशील स्तोत्र साधक-प्रवर श्री श्यामानन्दनाथ जी ने दिया है। श्री बगलामुखी एवं श्री प्रत्यङ्गिरा दोनों शक्तियों का स्वरूप इस अंश में विलक्षण प्रभाव रखता है, यह सारा साधक-समुदाय जानता है, विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं है।

कृत्या क्या है ?

'कृती छेदने' इस धातु से 'कृत्या' शब्द बनता है, जिसका अर्थ हिंसात्मक कार्य होता है। इसी अर्थ को लेकर इसकी लोक में प्रवृत्ति भी है। अम्बरीष के ऊपर दुर्वासा ने ऐसा ही किया था; शङ्कर-दिग्विजय में आचार्य शङ्कर के ऊपर भी अभिचार किया गया था, इसका उल्लेख मिलता है; भाषा-रामायण के कर्त्ता श्री तुलसीदास के ऊपर भी किया गया था। आजकल भी कहीं-कहीं इसका अस्तित्व देखने को मिलता है। उक्त अर्थ में ही कोशों में भी 'कृत्या' का अर्थ मिलता है। पण्डित श्रीधर गणेश वाजे, बी० ए० कृत 'इंग्लिश मराठी डिक्शनरी' में 'कृत्या' का अर्थ ऐसा ही किया गया है—

'कृत्या वह स्त्री देवता है, जिसकी पूजा-बलि विनाश के लिये की जाती है। तान्त्रिक कृत्या विशेष कृत्या है। आजकल के नव-शिक्षित-गण इस कर्म पर विश्वास नहीं करते हैं, न इसकी सत्ता ही मानते हैं। इसी से प्रेरित होकर कृत्या के प्रतिपादन करनेवाले वैदिक सूत्रों का अर्थ आर्यसमाज के कई पंडितों ने असङ्गत एवं कल्पना-मूलक ही किया है। पण्डित श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ने तो निष्पक्ष-पात दृष्टि से अपने अथर्ववेद के सुबोध भाष्य में अपनी अनभिज्ञता इस विषय की स्वीकार की है और कहा है कि 'जो कोई विद्वान् इसे हमें बतायेंगे, हम सधन्यवाद स्वीकार करेंगे और प्रकाशित करेंगे।'

विशेषतः इस कर्म के करनेवाले शाबर तन्त्रों का आश्रय लेकर करते हैं। उन्हीं के पास इसकी क्रिया देखी गई है। यह एक प्रकार का आसुरी कर्म है। इसके करनेवाले को अधम बताया गया है। यह सृष्टि के प्रथम काल से ही होता आ रहा है। अतः इसकी निवृत्ति के उपाय वेद एवं तन्त्रों में बताये गये हैं। श्रीबगला एवं प्रत्यङ्गिरा शक्ति का अभ्यास इसके नष्ट करने के अमोघ उपाय हैं।

संक्षिप्त श्रीबगला-साधन

सत्सम्प्रदायानुसार पहले पहल साधक को गुरु से बगला मन्त्र का उपदेश ग्रहण कर, ब्रह्मचर्य-पूर्वक देवी-मन्दिर में, पर्वत-शिखर पर, शिवालय में, गुरु के समीप या जैसी सुविधा हो, पीताचार से मात्र मन्त्र का पुरश्चरण एक लक्ष जप-पूर्वक करना चाहिये। षट्-त्रिंशदक्षर मन्त्र का साधन ही प्रधान है। एकाक्षर स्थिरमाया, चतुरक्षर, अष्टाक्षर, नवाक्षर, हृदय, शताक्षर, पञ्चास्त्र मन्त्रों को क्रम से ग्रहण करके सहस्राक्षर मन्त्र पर्यन्त अभ्यास मन्त्र-सिद्धि की परम अवधि है। पञ्चाङ्ग, उपनिषद् का प्रतिदिन पाठ और नित्यार्चन-पद्धति से पूजन करना चाहिये। रुद्रयामलोक्त वृहत्पद्धति का अनुष्ठान तो आजकल बहुत कठिन और समय-साध्य है। होम के विषय में यद्यपि कृताकृत प्रसङ्ग है तथापि पूजाङ्ग-रूप से नित्य-होम का होना अत्यन्त सिद्धि-प्रद है।

इस घोर कलि-काल में श्री बगला के प्रयोग प्रत्यक्ष सिद्धि-प्रद हैं। इसीलिये तन्त्रों में इन्हें सिद्ध-विद्या कहा गया है। विशेषतः राज्याभियोग में अप्रतिम प्रभाव इनका देखा गया है। मुमुक्षु-गण तो काम क्रोध आदि दुष्टों के स्तम्भन, कीलन एवं विनाश में ही इनका उपयोग करते हैं। काम के जीतने में भगवान् श्रीकृष्ण ने भी गीता में स्तम्भन का प्रयोग अर्जुन को बताया है—

एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना। जहि शत्रुं महाबाहो ! काम-रूपं दुरासदम् ॥ (गी०अ०३)।

कुलाचार का पूजन, वीर-साधन, चक्रानुष्ठान-पद्धति भी इनकी उपलब्ध होती है। स्वगुरु के आचारानुसार इनका साधन करना चाहिये। सभी आचारों से बगला सिद्धि-प्रद देवता है।

रहस्य-स्तोत्रम्

ब्रह्मादि-देव-गण-वन्दित-पाद-पद्मां, विश्वेश्वरीं निखिल-विश्व-विकासयित्रीम्।
आधार-पद्म-गत-कुण्डलिनीं वरेण्यां, देवीं प्रणौमि बगलां पर-तत्त्व-रूपाम् ॥ १

आविष्करोषि भुवनं परमेशितुस्त्वं, स्पन्दं च तत्त्व-निचयं धरणी-शिवान्तम्।
त्वं कारणं परम-विन्दु-प्रकाशकस्य, मातर्नमामि सततं तव रूपमेतत् ॥ २

नादैश्च वर्ण-निवहैस्तव चित्र-वृत्तं, पश्यन्ति योगि-पुरुषा निहितं गुहायाम्।
ग्रन्थि - प्रभेदन - पटोर्लय-चिन्तकस्य, जोषं त्वदीय - चरितं मुखरी करोति ॥ ३

भेदाविभेद - मतयस्तव दिव्य - रूपे, नित्यं गृणन्ति बहुशो मनसाप्यगम्ये।
नूनं न ते विकृत-भाव-विडम्बिता वै, जानन्ति देवि ! तव कृत्यमचिन्त्य-रूपम् ॥४

पश्यन्ति शुद्ध-मनसो मुनयो मनोज्ञां, विद्युल्लता-सदृश-वक्र-गतिं सु-तन्वीम्।
षट्-चक्र-भेद-निपुणामनलाभ-कान्तिं, मूलाधिवास-निरतां च परे लयन्तीम् ॥५

मुक्ता भवन्ति यतिनो व्रतिनो महान्तो, दन्दह्य भेद-विततं भव-क्लेश-जातम्।
नाविर्भवन्ति जगतां जनि-दुःख-भावो, ध्यात्वा त्वदीयममलं पर-रूपमाद्यम् ॥६

मध्ये सुधाब्धि-मणि-मण्डप-रत्न-वेद्यां, सिंहासनोपरि-गतां परिपीत-वर्णाम्।
पीताम्बरां सकल-देव-गणैर्निषेव्यां, देवीं स्मरामि सततं भव-बन्ध-मुक्त्यै ॥७

इत्थं त्वदीय-चरितं सुविचिन्त्य-नित्यं, गच्छन्ति ते पदमनामयमम्बिके ! ते।
भोगान् समस्त-जगतां परिलभ्य नूनं, स्वानन्द-वारि-निधि सौख्य-भुजो भवन्ति ॥८

फल-श्रुति

परा-शक्तेरिदं स्तोत्रं ये पठन्ति नरा भुवि, वाञ्छितं सुफलं तेषां भवत्येव न संशयः ॥९

श्री ७ भगवती
बगलामुखी

'कुल-मार्तण्ड' राजगुरु पण्डित योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति जी शास्त्री

श्रीपीताम्बरा भगवती बगलामुखी दक्षिणाम्नाय की देवता हैं। इनकी उपासना दक्षिणाम्नाय से होती है। यह बात निम्नलिखित आम्नाय स्तोत्र से विदित हो जाती है। यथा—

सौभाग्य-विद्या बगला वाराही बटुकस्तथा। श्री तिरस्करिणी प्रोक्ता दक्षिणाम्नाय-देवताः॥
त्रिंशत्सहस्र-दैवत्याः पूर्ण-पीठे स्थिताः सदा। भैरवादि पद-द्वन्द्वं भजे दक्षिणमुत्तमम्॥

इसी बात की पुष्टि बड़वानल तन्त्र भी करता है—

निशेशी दक्षिणा काली बगला छिन्नमस्तका। भद्रा तारा च मातङ्गी दक्षिणाम्नाय-देवताः॥

अर्थात् दक्षिण काली, बगलामुखी और छिन्नमस्ता आदि विद्यायें दक्षिणाम्नाय की देवता हैं। परा-तन्त्र की भी यही सम्मति है—

मृत्युञ्जया चर्चिका च सिंही दक्षिण-कालिका। प्रचण्डा उग्र-चण्डा च उग्र-तारा कपालिनी॥
त्वरिता छिन्न-शीर्षा च बगला वाक्-प्रदायिनी। दक्षिणाम्नाय-देवेशी नाना-भेद-विशारिणी॥

सारांश यह है कि उग्रतारा, दक्षिण कालिका, छिन्नमस्ता और बगलामुखी आदि देवता दक्षिणाम्नाय की हैं अर्थात् इनकी उपासना दक्षिणाम्नाय से होती है।

श्री बगलामुखी के यन्त्र के विषय में निम्नलिखित वचन है—

मध्ये योनिं समालिख्य तद्-बाह्ये तु षडस्रकम्। तद्-बाह्येऽष्ट-दलं पद्मं तद्-बाह्ये षोडशच्छदम्॥
चतुरस्र - त्रयं बाह्ये चतुर्द्वारोप-शोभितम्।

अर्थात् पहले योनि शक्ति-त्रिकोण (अधोमुख त्रिकोण) लिखकर उसके बाहर षट्-कोण, उसके बाहर अष्ट-दल, पुनः उसके बाहर षोडश-दल लिखे। तदनन्तर चतुर्द्वारों से युक्त चतुरस्र भूपुर लिखे। यह बगलामुखी का यन्त्र है। इसमें अष्ट-दल, षट्कोण के बाहर एक वृत्त देकर बनाया जाता है। पुनः अष्ट-दल के उपरान्त एक वृत्त दिया जाता है। तदनन्तर षोडश-दल लिखा जाता है। उसके बाहर वृत्त नहीं बनाया जाता है। तदनन्तर भूपुर बनाया जाता है।

शाक्त-प्रमोद में इस यन्त्र का उद्धार ऐसा लिखा है।

'त्र्यस्रं षडस्रं वृत्तमष्ट - दल - पद्मं भूपुरान्वितं।'

अर्थात् त्रिकोण, षट्कोण, अष्टदल कमल और भूपुर—यही बगलामुखी का यन्त्र है।

इस विषय में कुछ पता नहीं है कि उक्त बगला-यन्त्र का रचना-प्रकार किस ग्रन्थ के आधार पर है। प्रमाण नहीं लिखा है।

इसका मन्त्रोद्धार निम्न प्रकार है—

प्रणवं स्थिर-मायां च ततश्च बगलामुखि। तदन्ते सर्व-दुष्टानां ततो वाचं मुखं पदम् ॥
स्तम्भयेति ततो जिह्वां कीलयेति पद-द्वयं। बुद्धिं नाशय पश्चात् स्थिर-मायां समालिखेत् ॥
लिखेच्च पुनरोङ्कारं स्वाहेति पदमन्ततः। षट्-त्रिंशदक्षरी विद्या सर्व-सम्पत्करी मता ॥

अर्थात् प्रणव 'ॐ' कार, स्थिरमाया 'ह्लीं', इसके अनन्तर 'बगला-मुखि', तब 'सर्व-दुष्टानां', इसके उपरान्त 'वाचं मुखं पदं', फिर 'स्तम्भय', इसके साथ 'जिह्वां कीलय'—इन दो पदों को जोड़े। फिर 'कीलय' के अन्त में 'बुद्धि नाशय' ये दो पद जोड़े और इन दो पदों के अन्त में 'ह्लीं ॐ' और 'स्वाहा' इनके जोड़ने से ३६ अक्षरों का बगलामुखी का मन्त्र बन जाता है।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबगलामुखी-मन्त्रस्य नारद ऋषिः, त्रिष्टुप् छन्दः, श्रीबगलामुखी देवता, ह्लीं बीजं, स्वाहा शक्तिः, प्रणवः कीलकं, ममाभीष्ट-सिध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—शिर में नारद ऋषि, मुख में त्रिष्टुप् छन्द, हृदय में श्री बगलामुखी, गुह्य में ह्लीं बीज, पैरों में स्वाहा शक्ति, और सर्वाङ्ग में प्रणव कीलक का न्यास होगा।

कर-न्यास—अंगुष्ठों में 'ॐ ह्लीं', तर्जनियों में 'बगलामुखि', मध्यमाओं में 'सर्व-दुष्टानां', अनामिकाओं में 'वाचं मुखं पदं स्तम्भय', कनिष्ठाओं में 'जिह्वां कीलय', करतल-करपृष्ठों में 'बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा' का न्यास करे।

षडङ्ग-न्यास—'ॐ ह्लीं' का हृदय में, 'बगलामुखि' का शिर में, 'सर्व-दुष्टानां' का शिखा में, 'वाचं मुखं पदं स्तम्भय' का कवच में, 'जिह्वां कीलय' का नेत्र-त्रय में, 'बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा' का अस्त्र में न्यास करे।

पुनः मन्त्राक्षर-न्यास कर निम्न प्रकार से ध्यान करे। यथा—

मध्ये सुधाऽब्धि-मणि-मण्डप-रत्न-वेद्यां, सिंहासनोपरि-गतां परि-पीत-वर्णाम्।
पीताम्बराऽऽभरण-माल्य-विभूषिताङ्गीं, देवीं नमामि धृत-मुद्गर-वैरि-जिह्वां ॥
जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं, वामेन शत्रून् परि - पीडयन्तीं।
गदाभिघातेन च दक्षिणेन, पीताम्बराढ्यां द्वि-भुजां नमामि ॥

अर्थात् सुधा-सागर (अमृत-समुद्र) में मणि-निर्मित मण्डप बना हुआ है और उसके मध्य भाग में रत्नों की बनी हुई चौकोर वेदिका में सिंहासन लगा हुआ है अर्थात् सजा हुआ है; उसके मध्य भाग में पीले रङ्ग के वस्त्र और आभूषण तथा पुष्पों से सजी हुई श्री भगवती वगलामुखी को मैं प्रणाम करता हूँ। भगवती वगलामुखी का नाम पीताम्वरा भी है अर्थात् जिनके वस्त्र पीतवर्ण (पीले रङ्ग) के हैं; केवल वस्त्र ही पीत नहीं हैं; वरन् उनके भूषण भी पीत रङ्ग के ही हैं तथा वह पुष्पों को भी, जो पीले रङ्ग के हों, उनको ही धारण करती हैं। अर्थात् उनकी सब वस्तुयें पीत वर्ण ही हैं। भगवती पीताम्वरा के दो हाथ हैं; वाएँ से शत्रु की जिह्वा को बाहर खींच कर दाहिने हाथ पर धारण किये हुए मुद्गर से उसको पीड़ित कर रही हैं।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजन किया जाता है। तदनन्तर श्रीभगवती के मन्त्र का जप होता है।

इसके पुरश्चरण में एक लक्ष जप का विधान है। इसके मन्त्र के जप के लिये हरिद्रा-ग्रन्थि की माला प्रशस्त है और हवन में भी पीत पुष्पों का ही उल्लेख मिलता है। यथा—

पीताम्बर-धरो भूत्वा पूर्वाशाऽभिमुख-स्थितः। लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हरिद्रा-ग्रन्थि-मालया॥
ब्रह्मचर्य-रतो नित्यं प्रयतो ध्यान-तत्परः। प्रियंगु-कुसुमेनापि पीत-पुष्पैश्च होमयेत्॥

अर्थात् पीला वस्त्र पहन कर पूर्व दिशा को मुख करके बैठे। हल्दी की माला से मन्त्र का एक लाख जप करे। ब्रह्मचर्य का पालन करे और नित्य ध्यान में लगा रहे। प्रियंगु-पुष्प और पीले फूलों से हवन करे।

बगला का मुख्य मन्त्र स्थिर-माया 'ह्लीं' है। जैसे माया-बीज 'ह्रीं' को भुवनेश्वरी-बीज कहते हैं, वैसे ही स्थिर-माया को बगला बीज कहते हैं। किन्तु यह दक्षिणाम्नायात्मक है, अतएव बगला के बहुत से मन्त्रों में इस बीज के होने से बगला दक्षिणाम्नायात्मका है और दक्षिणाम्नायात्मिका बगला के केवल दो ही भुजायें हैं।

जब यह चतुर्भुजी होती है, तब विपरीत गायत्री (ब्रह्मास्त्र) रूपिणी बन जाती है, फिर इसके मन्त्र में बगला-माया के स्थान पर भुवना-माया होगा। ऐसी स्थिति में बगलामुखी ऊर्ध्वाम्नायात्मिका होती है। इसका मन्त्रोद्धार निम्न-लिखित है—

देवि श्री-भव-वल्लभे ! शृणु महा-मन्त्रं विभूति-प्रदं। देव्या वर्म-युतं समस्त-सुखदं साम्राज्यदं मुक्तिदम्॥
तारं रुद्र-वधूं विरञ्चि-महिला विष्णु-प्रिया काम-युक्। कान्ते श्रीबगलानने ! मम रिपुं नाशय युग्मं त्विति॥
ऐश्वर्याणि पदं च देहि युगलं शीघ्रं मनोवाञ्छितम्। कार्यं साधय युग्म-युक् शिव-वधू वह्नि-प्रियान्तो मनुः॥

अर्थात् '**ॐ ह्लीं श्रीं क्लीं श्रीबगलामुखि मम रिपून् नाशय नाशय ऐश्वर्याणि देहि देहि मनोवांछितं कार्यं साधय साधय ह्लीं स्वाहा**' ऐसा मन्त्र बनता है।

किन्तु यदि षट्-त्रिंशदक्षरी ही रखना हो तो '**ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं बगलामुखि रिपून् नाशय नाशय ऐश्वर्यं देहि देहि अभीष्टं साधय साधय ह्लीं स्वाहा।**' ऐसा बनेगा।

विदित होता है कि छन्द-पूर्ति के लिये अक्षर बढ़ाये गये हैं।

इस मन्त्र का विनियोग निम्नलिखित श्लोक में दिया गया है।

कंसारेस्तनयं च बीजमपरा-शक्तिश्च वाणी तथा, कीलं श्रीयुतं, भैरवार्षि-सहितं छन्दो विराट् संयुतम्॥
स्वेष्टाहास्य परस्य वेति नितरां कार्यस्य सम्प्राप्तये। नानाऽऽसाध्य-महा-गदस्य नाशाय स्वाभीष्ट-वीर्याप्तये।
ध्यात्वा श्रीबगलाननां मनु-वरं जप्त्वा सहस्रारकम्। दीर्घैः षट्क-युतैश्च रुद्र-महिला-बीजैर्विन्यस्याङ्गके॥

अर्थात् इस मन्त्र का श्रीभैरव ऋषि, विराट् छन्द, श्रीबगलामुखी देवता, काम बीज, अपरा शक्ति, वाणी कीलक और अभीष्ट-सिद्धि, शक्ति-प्राप्ति अथवा रोग-शान्ति के लिये विनियोग है। रुद्र-महिला के षड्-दीर्घ बीजों ('ह्लां ह्लीं' इत्यादि) से अङ्ग-न्यास किया जाता है।

इस मन्त्र के देवता का ध्यान निम्न प्रकार से करे—

सौवर्णासन - संस्थितां त्रि - नयनां पीतांशुकोल्लासिनीं,
हेमाभाङ्ग - रुचिं शशाङ्क - मुकुटां स्रक् - चम्पक - स्रग् - युताम्।
हस्तैर्मुद्‌गर - पाश - वज्र - रसनां संबिभ्रतीं भूषण-
व्याप्ताङ्गीं बगलामुखीं त्रि - जगतां संस्तम्भिनीं चिन्तयेत्॥

यह ऊर्ध्वाम्नायात्मिका बगलामुखी का ध्यान है। इस बगलामुखी भगवती में त्रिलोकी के स्तम्भन करने की शक्ति है। अतएव 'श्रीपीताम्बरा-पीठ' के संस्थापक 'राष्ट्रगुरु' श्री १००८ स्वामीजी ने राष्ट्र-रक्षाऽनुष्ठान में ऊर्ध्वाम्नायात्मिका त्रिभुवन-स्तम्भन-कारिणी भगवती श्री बगलामुखी के मन्त्र से ही सम्पुटित एक सहस्र दुर्गा सप्तशती का पाठ कराया था।

साधक अपने अधिकारानुसार दक्षिणाम्नाय या ऊर्ध्वाम्नाय से इसकी उपासना कर सकता है। भगवती बगला के उभयाम्नायात्मिका होने का कारण यह है कि इस उपर्युक्त मन्त्र में स्थिरा माया विद्यमान है और ध्यान में चतुर्भुजा है।

इनके मन्त्र और ध्यानादि मेरुतन्त्र में भी लिखे हैं। यथा—

अतः सम्प्रवक्ष्यामि स्तम्भिनीं बगलामुखीम्। तारं मायां समुच्चार्य वदेच्च बगलामुखि॥
तदग्रे सर्व-दुष्टानां ततो वाचं मुखं पदम्। स्तम्भयेति पदं जिह्वां कीलयेति ततः परम्॥
बुद्धि विनाशय ह्रीं ओं स्वाहा षट्-त्रिंशद्वर्णकः।

अर्थात् स्तम्भिनी बगलामुखी का मन्त्र है—तार (ॐ), माया (ह्रीं), बगलामुखि सर्व-दुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धि विनाशय, माया (ह्रीं) तार (प्रणव), स्वाहा। ३६ अक्षर के इस मन्त्र में 'ह्रीं' दिया गया है। पहले लिखे गये मन्त्र में 'ह्लीं' यह बीज है।

इस माया-बीजवाले बगला-मन्त्र का ऋषि नारायण, छन्द त्रिष्टुप्, बीज हृल्लेखा (ह्रीं), शक्ति स्वाहा और विनियोग पुरुषार्थ-चतुष्टय है।

ह्रीं—हृदयं, बगलामुखि—शिरः, सर्व-दुष्टानां—शिखा, वाचं मुखं पदं स्तम्भय—वर्म (कवच), जिह्वां कीलय—नेत्र-त्रय, बुद्धि विनाशय—अस्त्र। यह इसका षडङ्ग-न्यास है।

इस षट्-त्रिंशाक्षर-विग्रहा बगलामुखी का ध्यान मेरुतन्त्र में इस प्रकार दिया है—

गम्भीरां च मदोन्मत्तां तप्त-काञ्चन-सन्निभाम्। चतुर्भुजां त्रि-नयनां कमलासन-संस्थिताम्॥
मुद्गरं दक्षिणे पाशं वामे जिह्वां च वज्रकम्। पीताम्बर-धरां सान्द्र-वृत्त-पीन-पयोधराम्॥
हेम-कुण्डल-भूषां च पीत-चन्द्रार्ध-शेखराम्। पीत-भूषण-भूषां च स्वर्ण-सिंहासन-स्थिताम्॥

अर्थात् साधक गम्भीराकृति, मद से उन्मत्त, तपाये हुये सोने के समान रंगवाली, पीताम्बर धारण किये, वर्तुलाकार परस्पर मिले हुये पीन स्तनोंवाली, सुवर्ण-कुण्डलों से मण्डित, पीत-शशिकला-सुशोभित-मस्तका भगवती पीताम्बरा का ध्यान करे, जिसके दाहिने दोनों हाथों में मुद्गर और पाश सुशोभित हो रहे हैं तथा वाम करों में वैरि-जिह्वा और वज्र विराज रहे हैं तथा जो पीले रंग के वस्त्राभूषणों से सुशोभित होकर सुवर्ण-सिंहासन में कमलासन पर विराजमान है।

श्री बगलामुखी के मूल-मन्त्र का उद्धार सांख्यायन तन्त्र के पाँचवें पटल में इस प्रकार दिया है—

सोऽन्त(ह)रा न्त(ल)-समायुक्तं चतुर्थ-स्वर (ई)-संयुतं। रेफान्तान्तं (र) विन्दु-युक्तं ब्रह्मास्त्रैकाक्षरो मनुः। (ह्लीं)

किन्तु दूसरे तन्त्रों में '**वह्नि-हीनेन्दु-युग्-माया स्थिर-माया प्रकीर्तिता**' अर्थात् 'ह्लीं' ही मिलता है अर्थात् इसमें वह्नि (र) नहीं है। बीज-कोश में भी इसी प्रकार है। इस रेफ-सहित बीज को कीलित स्तम्भित बताया गया है और रेफ-युक्त बीज 'ह्लीं' को श्रेष्ठ माना है। यथा—सांख्यायन तन्त्र, ३२ वाँ पटल—

स्थिर-बीजं समुद्धृत्य रति-विन्दु-विभूषितम् । स्थिर-माया त्वियं पुत्र ! विन्द्वर्ध-चन्द्र-भूषिता ।।
इयं शप्ता महा-विद्या कीलिता स्तम्भिता सुत ! रेफ-योगान्तहाशैव निःशप्ता फल-दायिनी ।।
रेफ-युक्तां जपेद् विद्यां फल-हीनां न संजपेत् । रेफ-हीनां जपन् विद्यां कोटि-जापान्न सिद्धयति ।।

अर्थात् 'ह्लीं' यह स्थिर-माया बीज, जो कि रेफ से रहित है, शप्त है अर्थात् यह किसी से शापित है तथा इसको किसी ने कीलित भी कर दिया है । इतना ही नहीं, इसका स्तम्भन भी किया है । अतः हे पुत्र ! रेफ-रहित स्थिर-माया-बीज 'ह्लीं' का जपना निरर्थक है । इस स्थिर-माया विद्या को रेफ संयुक्त कर अर्थात् 'ह्लीं' बनाकर जपने से शापोद्धार हो जाता है तथा इसके कीलन और स्तम्भन-दोष भी दूर हो जाते हैं । अतः इसको रेफ से संयुक्त करके ही जपना चाहिये । यदि इतना कहने पर भी रेफ-रहित 'ह्लीं' जपोगे, तो एक करोड़ पुरश्चरण करने पर भी तुम्हें यह विद्या सिद्धि-दायिनी नहीं हो सकती ।

यह गुरु-शिष्य-संवाद अथवा नारद-सांख्यायन-संवाद है । यतः सांख्यायन देवर्षि नारद के शिष्य थे ।

भगवती बगलामुखी की गणना दश महा-विद्याओं में है । यथा—

काली तारा षोडशी च भुवना बगलामुखी, भैरवी कमला धूमा मातङ्गी छिन्नमस्तका,
एता दश महाविद्याः सिद्ध-विद्याः प्रकीर्तिताः ।

शाक्तोपासना में मोक्ष-प्राप्ति तो प्रथम वस्तु है ही, किन्तु श्रीबगलामुखी की उपासना में मोक्ष के अतिरिक्त ऐहिक सुख की उपलब्धि भी होती है । इस ऐहिक सुख के तीन स्वरूप हैं, जो कि शान्तिक, पौष्टिक और आभिचारिक नाम से विदित हैं । दैवी प्रकोप से उत्पन्न आधि-व्याधियों का शमन शान्ति-कर्म से होता है । धन-जन आदि लौकिक उपयोगी वस्तुओं की वृद्धि के लिये पौष्टिक कर्मों का अनुष्ठान किया जाता है और शत्रुओं के निग्रह के लिये आभिचारिक कर्मों का विधान है । इन तीनों कर्मों का अनुष्ठान स्तम्भन-महा-शक्ति के रूप से होता है । आधि-व्याधि का निरोध स्तम्भन का प्रधान कार्य है । दारिद्रय-ग्रस्त मनुष्यों को पौष्टिक कर्मों द्वारा धन-जन की वृद्धि करने में स्तम्भन-शक्ति का उपयोग होता है । मारण, मोहन, उच्चाटनादि आभिचारिक कर्मों में तो स्तम्भन-शक्ति का साम्राज्य ही है । श्रीबगला-मुखी का प्रसिद्ध तन्त्र-ग्रन्थ सांख्यायन तन्त्र इससे भरा हुआ है ।

हमारे गढ़वाल देश के बहुत से भागों में शत्रु के नाश को अथवा उसे हानि पहुँचाने को इस कृत्या-प्रयोग का पर्याप्त रूप में प्रचार है । यवों (जौ) के आटे की एक मूर्ति छोटी-सी एक वेत के करीब बनाई जाती है । उस पर नख, वाल आदि लगाकर तथा गन्धाक्षत लगाकर शावर मन्त्रों से अभिमन्त्रित कर चौराहे में अथवा अन्य अपवित्र स्थान में गाड़ देते हैं, जहाँ पर लोगों के पैर पड़ते रहें । यह कार्य करना अथवा कराना अच्छा नहीं माना जाता है । किन्तु इस शावर विद्या से लोग अभी भी आजीविका करते हैं । परन्तु ऐसी विद्या से आजीविका करनेवाले फलते-फूलते नहीं दिखाई देते ।

श्रीबगलामुखी की उपासना वामाचार, कौलाचार तथा दक्षिणाचार—इन तीनों आचारों से होती है । किन्तु वाम और कौलाचार से उपासना में सिद्धि शीघ्र प्राप्त होती है ।

पदार्थ वैज्ञानिक की दृष्टि में—

भगवती पीताम्बरा

श्रीमती कान्ति देवी कुशवाहा, राजस्थान

[भगवती बगलामुखी का सम्बन्ध 'अथर्वा' नामक तेज-स्वरूपा शक्ति से है। यह शक्ति सभी वस्तुओं और प्राणियों से निकलती रहती है। इस शक्ति के द्वारा किसी का भी आकर्षण, विकर्षण, स्तम्भन आदि किया जा सकता है। अतः प्रस्तुत लेख में 'अथर्वा' का जो वैज्ञानिक विवेचन किया गया है, उसे ध्यान से पढ़कर समझ लेना उपयोगी होगा।—सं०]

अथर्वा

पदार्थ मात्र के चतुर्दिक् एक विशिष्ट प्रकार का तेजोमण्डल सर्वदा विद्यमान रहता है। यह तेजोमण्डल, जिसको अंग्रेजी भाषा में 'ओरा' और संस्कृत में 'अथर्वा' के नाम से अभिहित किया गया है, सप्राण देह के चतुर्दिक् अत्यन्त चैतन्य एवं क्रिया-शील रूप में रहता है; जब कि जड़-पदार्थ के चतुर्दिक् अवस्थित यही तेजोमण्डल सुप्तावस्था में रहता है। यह भिन्न बात है कि जड़-पदार्थ के चतुर्दिक् स्थित यह तेजोमण्डल यदि किसी घटना विशेष के घटित किये जाने पर जाग्रत् हो उठता है, तो तत्क्षण किसी भी चैतन्य 'ओरा' की ओर तीव्रता से अभिमुख होता है एवं शीघ्र ही उस चैतन्य 'ओरा' को अभिभूत कर लेने में समर्थ होता है।

ये सब बातें कल्पना-प्रसूत नहीं वरन् प्रत्यक्ष अनुभूत तथ्य हैं। पाश्चात्य वैज्ञानिक केवल इस तेजोमण्डल को अपने यान्त्रिक उपकरणों से देख पाने में ही समर्थ नहीं हुये हैं वरन् उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति के चतुर्दिक् स्थित इस तेजोमण्डल के रङ्गों की भिन्नता के आधार पर व्यक्ति के स्वभाव, चरित्र एवं जीवन की प्रधान घटनाओं का अनुमान लगाने की पद्धति भी खोज निकाली है।

'अथर्वा' केवल यांत्रिक उपकरणों के बल से ही दृश्य हो, ऐसी बात नहीं है। सूर्य की विशेष कोण से आती हुई किरणों की उपस्थिति में वह अक्सर नङ्गी आँखों से देखा जा सकता है। सूर्यग्रहण-काल में यह स्थिति देखने में आती है। ग्रीष्मकाल में बिना सूर्यग्रहण के ही मार्तण्ड की प्रचण्ड रश्मियों की स्थिति में रश्मियों का वह कोण बनाने पर नग्न नेत्रों से 'अथर्वा' के दर्शन होते हैं। 'अथर्वा' को तो सर्वदा नहीं किन्तु 'अथर्वा' की छाया को कोई भी व्यक्ति प्रयास करने पर सरलता से देख सकता है। कई बार दीवार पर पड़ती हुई शरीर की छाया के आस-पास एक हल्की छाया का मण्डल प्रत्यक्ष देखने को मिलता है। यही उस अदृश्य 'अथर्वा' की छाया है।

अथर्वा के रङ्ग

सम्पूर्ण पदार्थों के चतुर्दिक् स्थित 'अथर्वा' एक रङ्ग का नहीं होता। भिन्न-भिन्न पदार्थों के चतुर्दिक् स्थित यह तेजोमण्डल भिन्न-भिन्न वर्णों का होता है। जड़ पदार्थों के सुप्त अथर्वा एवं चैतन्य प्राणी के सचेतन 'अथर्वा' में इतना अन्तर होता है कि जड़-पदार्थ के चतुर्दिक् स्थित 'अथर्वा' करीब उसी रङ्ग का होता है, जिस रङ्ग का वह पदार्थ है। 'अथर्वा' में स्थित रङ्ग 'अथर्वा' की सूक्ष्मता के अनुरूप सूक्ष्म होता है। सूक्ष्म ही स्थूल का कारण होता है। दूसरे शब्दों में सूक्ष्म से स्थूल की उत्पत्ति होती है, इस

तथ्य की विवेचना को आवश्यकता नहीं। अब जड़ पदार्थ के चतुर्दिक् स्थित 'अथर्वा' का जो रङ्ग सूक्ष्म रूप में होता है, उससे ही उसके अनुरूप ही उक्त पदार्थ के गोचर रङ्ग की सृष्टि होती है। इस प्रकार लाल रङ्ग का पदार्थ देखकर आसानी से समझा जा सकता है कि इसके चतुर्दिक् आवृत 'अथर्वा' का सूक्ष्म रङ्ग लाल है। इसी प्रकार पीले पदार्थ का 'अथर्वा' पीला या नीले पदार्थ का नीला होता है।

किन्तु, चैतन्य प्राणी के 'अथर्वा' में यह बात नहीं होती। साधारणतया चैतन्य प्राणी का 'अथर्वा' व्यक्ति के स्वभाव, चरित्र एवं विचारों से प्रभावित—रञ्जित होता है। किस-किस प्रकार के स्वभाव, चरित्र या विचारों के परिणाम में किस-किस प्रकार का रङ्ग 'अथर्वा' का होता है, इसका विवेचन पाश्चात्य विद्वानों ने विशद रूप से किया है। उसे उन्हीं के ग्रन्थों में देखना उचित होगा।

अथर्वा का प्रभाव

चैतन्य प्राणी के चतुर्दिक् अवस्थित 'अथर्वा' उक्त प्राणी से व्यवहृत प्रत्येक पदार्थ पर अपना स्थायी या अस्थायी प्रभाव छोड़ता है। किन पदार्थों पर स्थायी एवं किन पदार्थों पर अस्थायी प्रभाव छोड़ता है, यह एक विशद विषय है। किन्तु प्रधानतया मानव देह के जिन अवयवों से नित्य अनवरत विशिष्ट विद्युत् प्रवाह निसृत होता रहता है, उन अवयवों के द्वारा नित्य व्यवहृत पदार्थ पर प्रभाव दीर्घ-कालव्यापी और शक्तिशाली होता है। उदाहरण के लिये करांगुली, पदांगुली, भृकुटि, ब्रह्मरन्ध्र, दृष्टि आदि से अत्यधिक मात्रा में नित्य विद्युत् प्रवाहित रहती है। आज जब मेस्मेरिज्म और हिप्नोटिज्म का यथेष्ट प्रचार हो चुका है, मानव देह के इन अवयवों से निसृत होनेवाली विद्युत् को सिद्ध करने की आवश्यकता शेष नहीं है। हाँ, तो हाथ में रात-दिन रहनेवाली वस्तु—छड़ी, रूमाल, लेखनी, पुस्तक आदि; शिर की टोपी, साफा, आँख का चश्मा; पैर के जूते, हाथ-पैर के मृत नाखून, शिर के बाल, दाढ़ी-मूछों के बाल आदि पदार्थ 'अथर्वा' से पूर्णरूपेण प्रभावित ही नहीं रहते, व्यक्ति के शरीर से पृथक् होकर भी 'अथर्वा' सूत्र के द्वारा उससे सम्बन्धित बने रहते हैं।

इस सम्बन्ध का कारण है। वह यह कि विश्व में 'मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना' है। एक व्यक्ति कभी दूसरे व्यक्ति से सम्पूर्णरूपेण समान नहीं हो सकता है। ब्रह्माजी का आदमी बनाने का साँचा जलेबी का ही साँचा है। दो जलेबियों में कभी समानता नहीं होती। कुछ-कुछ अन्तर अवश्य प्राप्त होगा ही। दो समान आकृति की—प्रत्येक मोड़, प्रत्येक स्थानीय मोटाई या पतलापन समान रखनेवाली जलेबी प्राप्त होना फिर भी सम्भव है किन्तु एक सी आकृति रखनेवाले दो जुड़वा उत्पन्न हुये भाइयों की भी प्रकृति और अनुभूति कभी समान नहीं होती। अतः उन दोनों के 'अथर्वा' में सूक्ष्म भेद अनिवार्य होता है।

अब जिस व्यक्ति की उक्त 'अथर्वा'-प्रभावित वस्तुएँ वे हैं, उस व्यक्ति के अतिरिक्त विश्व में उस पदार्थ पर अवस्थित 'अथर्वा' को और अपने जैसा 'अथर्वा' कहीं नहीं प्राप्त होता। इसे प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं है कि सूक्ष्म में देश और काल का बन्धन हुआ भी, तो सूक्ष्म गति इतनी तीव्र होती है कि कल्पनातीत अल्प समय में देश का आवरण वह पार करने में समर्थ होता है। प्रकाश दृश्य है और जो पदार्थ अपनी सूक्ष्मता के कारण प्रत्यक्ष दृश्य नहीं है, स्वभावतः उसकी गति प्रकाश से कई गुनी अधिक होगी। इस प्रकार किसी भी व्यक्ति द्वारा व्यवहृत वस्तु का 'अथर्वा' उस व्यक्ति के 'अथर्वा' से सर्वदा सम्बन्धित रहता है।

एक दिन सायं एक महात्माजी कुछ साधकों को मौन सत्संग करवा रहे थे। मौन सत्संग से आशय यह है कि सब साधक स्वच्छ हो अपने-अपने आसनों पर बैठकर एकाग्र होने का प्रयास करते हैं और उनके एकाग्र होने पर महात्मा कुछ विशेष प्रेरणाएँ उन्हें प्रदान करते हैं। सत्संग की सफलता इस

पर अवलम्बित है कि सम्पूर्ण साधकों ने पहिले न बताई गई उन प्रेरणाओं को समान भाव से ग्रहण किया या नहीं। उस दिन सत्संग के सम्पूर्ण प्रयास क्रमशः निष्फल हुये और नित्य अभ्यस्त साधक-वृन्द में से एक भी एकाग्र नहीं हो पाया। आध घण्टा महात्मा जो प्रयास करते रहे किन्तु कोई सफलता न मिलने पर उन्होंने नेत्र खोल दिये और मौन भंगकर कहा कि 'यहाँ इस कमरे में किसी बाह्य व्यक्ति की कोई वस्तु तो नहीं रखी है ?' देखने पर ज्ञात हुआ कि एक कोने में एक लाठी रखी थी। किसी ग्रामीण की, जो दिन रात मुकदमेबाजी किया करता था, वह लाठी थी। महात्मा जी ने तुरन्त एक व्यक्ति को आदेश दिया कि वह लाठी बाहर रख कर पुनः स्नान करके आकर बैठे। लाठी हटाई गई। ले जानेवाला स्नान कर आकर बैठा और सम्पूर्ण साधक तत्क्षण एकाग्र हो गये।

यह घटना क्या थी ? लाठी के चतुर्दिक् स्थित उसके वाहक के असंयत मस्तिष्क से प्रभावित 'अथर्वा' का प्रभाव।

सृष्टि में कुछ ऐसे पदार्थ हैं, जिन पर प्रभाव विलम्ब से होता है किन्तु स्थायी रहता है। मोटे तौर पर जिन पदार्थों में विद्युत् का संक्रमण सम्भव होता है, वे सब पदार्थ तत्काल 'अथर्वा' से प्रभावित होनेवाले नहीं होते वरन् विलम्ब से ही वे प्रभावित हो पाते हैं और उन पदार्थों का 'अथर्वा' विलम्ब तक ही व्यवहार करनेवाले के 'अथर्वा' से प्रभावित रहता है। इसके विपरीत जिन पदार्थों में विद्युत् संक्रमित नहीं हो पाती, वे तत्काल 'अथर्वा' से प्रभावित होते हैं और प्रभाव का त्याग भी शीघ्र ही कर देते हैं। यद्यपि यह कोई निश्चित नियम नहीं है। इसके अपवाद भी प्राप्य हैं किन्तु स्थूल-दृष्टचा यही नियम लागू होता है। सूती वस्त्र, काष्ठ एवं उद्भिद् से प्राप्त सम्पूर्ण पदार्थ, सम्पूर्ण वनस्पति और वानस्पतिक द्रव्यों का 'अथर्वा' तत्काल व्यवहार करनेवाले के 'अथर्वा' से प्रभावित होता है। रेशम और ऊन (केश) न शीघ्र प्रभाव ग्रहण करते हैं और न त्याग करते हैं। अपवाद में भूमि और भूमिज पदार्थ, मृत्तिका, पाषाण और खनिज तत्काल प्रभाव ग्रहण करते हैं और शीघ्र त्याग भी देते हैं।

पाश्चात्य वैज्ञानिक कहते हैं कि केश, नखादि पदार्थ यदि भूमि में गाड़ दिये जायें, तो एक निश्चित समय में वे जिस व्यक्ति के केश, नखादि हैं, उसके 'अथर्वा' के प्रभाव का शीघ्र त्याग कर देते हैं। उनकी धारणा से 'अथर्वा' का वह प्रभाव भूमि में मिल जाता है, किन्तु यह धारणा अज्ञान-प्रसूत है। वास्तव में इन पदार्थों के भूमि में गाड़ने पर जिस व्यक्ति के ये नख-केशादि हैं, उसका 'अथर्वा' एक निश्चित काल के भीतर उसी व्यक्ति के 'अथर्वा' से जा मिलता है और ये पदार्थ उस प्रभाव से मुक्त हो जाते हैं। इसका प्रबल प्रमाण यह है कि उन पदार्थों के भूमि में गाड़ने से पहिले यदि उनके चतुर्दिक् स्थित 'अथर्वा' को विशेष प्रयोग द्वारा दूषित कर दिया जाये तो उनके गाड़ने के उपरान्त जिस व्यक्ति के वे नख, केशादि हैं, उसका सम्पूर्ण 'अथर्वा' दूषित हो जाता है।

पीला रङ्ग

ऊपर जैसा कहा गया है, भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के 'अथर्वा' भिन्न-भिन्न रङ्गों के होते हैं। यह एक साधारण छात्र जानता है कि रङ्ग सूर्य-किरणों के परिणाम में ज्ञात होते हैं। सूर्य किरणों में प्रधानतया तीन और गौण रूप से सात रङ्ग अवस्थित हैं। इन सात रङ्गों को इन्द्रधनुष में जब मेघ में स्थित जल पर सूर्य की किरणें तिरछी होकर पड़ती हैं, आसानी से देखा जा सकता है। अथवा क्रिस्टल की तरह षट्-कोण, अष्टकोण कटे हुये आतिशी शीशे को धूप में रखकर सातों रङ्गों को उसके कोण से देखा जा सकता है।

वास्तव में रंग दृष्टि का विषय है और अग्नि-तत्व या दूसरे शब्दों में तेजस्तत्व का परिणाम है। तेजो-राशि सूर्य की किरणों में दृश्य वर्ण-सप्तक ही सम्पूर्ण वर्ण-गणना नहीं है। इन सात रंगों के अतिरिक्त तीन रङ्ग और हैं, जिनमें से एक सूर्य की किरणों के चन्द्र पर पड़ने से चन्द्रावरक तेज से निःसृत किरणों में प्राप्त होता है और दो पार्थिव अग्नि की किरणों में भासमान होते हैं। इन दश रंगों का समूह ही सम्पूर्ण तेजस् तत्व है। इन दश वर्णों में से प्रधान तीन रङ्ग हैं—१ पीला, २ लाल और ३ नीला। रासायनिक प्रथक्करण के द्वारा ज्ञात होता है कि—

पीले रंग में नाइट्रोजन, कार्बन, आक्सीजन, बेरियम, केल्सियम, स्ट्रान्टियम, केडमियम, कोबाल्ट, मेंगेनिज, टिटेनियम, एलम्यूनियम, क्रोमियम, लोहा, निकिल, ताँबा और जस्ता पाया जाता है।

पीलापन लिये हरे रंग में—आक्सीजन, नाइट्रोजन, कार्बन, सोडियम, केल्सियम, बेरियम, मेग्नेशियम, क्रोमियम, निकिल, ताँबा, एलम्यूनियम, टिटेनियम, स्ट्रान्टियम, केडमियम, कोबाल्ट और रूबीडियम होता है।

नारंगी रंग में—टिटेनियम, एलम्यूनियम, रूबीडियम, कोबाल्ट, जस्त, निकिल, लोहा, केल्सियम और आक्सीजन होता है।

पीलेपन युक्त नारंगी रंग में—मेंगनिज, निकिल, जस्ता, सोडियम, नाइट्रोजन और कार्बन।

इसी प्रकार गहरे नारंगी-रंग में—केडिमियम, स्ट्रान्टियम, ताँबा, लोहा, बेरियम, केल्सियम, नाइट्रोजन, आक्सीजन और हाइड्रोजन होता है।

मानव शरीर में—तीन चौथाई आक्सीजन, शेष में नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, क्लोरिन, फ्लुओरिन आदि तत्व होते हैं एवं भोजन-आहारादि द्वारा विभिन्न मात्राओं में मेग्नेशियम, पोटेशियम, सोडियम, सिलिकिन, केल्सियम, कार्बन, लिथियम, पारा, शीशा, ताँबा, लोहा, गंधक और फास्फोरस होते हैं।

पीला रंग वात का कारण, लाल पित्त का एवं नीला कफ का कारण है। वस्तुतः आयुर्वेद में शरीरस्थ ऊष्मा को पित्त, गति को वात एवं स्थायित्व को पित्त कहा गया है। दूसरे शब्दों में पीत-वर्ण गति का कारण है—शरीर के अन्तरवयवों की गति अथवा बाह्य अवयवों की गति। पीले रंग की काँच की बोतलों में सूर्य-रश्मि में रखा गया जल, तैल आदि रस-पाचक और विकार-शोधक होता है। मुख, नाक, गुदा या शरीर के किसी भाग से जाते हुये रक्त का स्तम्भन करता है। कण्ठ-माला, मधुमेह, बधिरता, चर्म रोग, कुष्ठ आदि में पीले रंग का प्रयोग लाभ-प्रद होता है। एक स्थान पर बैठे रहने से जिन्हें भोजन हजम नहीं होता, उनके निमित्त सूर्य को पीत-रश्मि से प्रस्तुत किया गया जल हितकर होता है। फसली बुखार, जुकाम और हिस्टीरिया जैसे मानस रोग में भी लाभ करता है।

इन सब बातों को सरसरी दृष्टि से देखते हुये एवं पीत-वर्ण तथा पीत-वर्ण के भेदों के घटकों पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि पीत-वर्ण केवल वात-गति का ही कारण नहीं। जहाँ वह गति के अभाव में गति-प्रद है, वहाँ गति के आधिक्य में अवसादक। चर्म रोग, ज्वरादि में जहाँ वह ऊष्मा को संयमित कर गति-अवरोधन का कार्य करता है, वहाँ अपने पाचक-शोधक गुण के कारण ऊष्मोत्पादन कर गति की वृद्धि करता है। कहने का आशय यह है कि पीत-वर्ण गति का (आयुर्वेदीय भाषा में वात का) सर्वतोभावेन संयामक है।

'अथर्वा' का वर्ण-परिवर्तन

विभिन्न व्यक्तियों का 'अथर्वा' विभिन्न वर्ण का होता है, किन्तु प्रकृति द्वारा व्यक्ति को यह स्वतन्त्रता प्राप्त है कि वह अपने अभ्यास-बल से अपने अथर्वा का विशिष्ट वर्ण बना ले। मनुष्य के चरित्र,

स्वभाव एवं विचारों के अनुकूल ही उसके आस-पास के तेजोमण्डल का रंग होता है। यह कई प्रकार के रंगों का घुला-मिला मिश्रण होता है। उसमें कौन-कौन रंगों का कितना-कितना अंश है, यह निर्णय करना कठिन है।

भारतीय विज्ञान उस तर्कसम्मत पद्धति को जन-साधारण के निमित्त सुलभ करता है, जिससे कोई भी प्रयत्न-शील व्यक्ति अपनी इच्छानुसार अपने 'अथर्वा' के वर्ण का निर्माण कर सकता है। ध्यान रहे, ऊपर जो बार-बार कहा गया है कि व्यक्ति के चरित्र, स्वभाव एवं विचारों के अनुरूप 'अथर्वा' का रंग होता है, उसका आशय यही है कि 'अथर्वा' के रंग के अनुरूप ही चरित्रादि का निर्माण होता है। अतः किसी व्यक्ति के चरित्रादि को देखकर उसके 'अथर्वा' के वर्ण का अनुमान किया जा सकता है। व्यक्ति विचारों के अनुरूप हो उसके चरित्र-स्वभाव का निर्माण होता है एवं विचारों के परिणाम में ही वह शुभाशुभ, हिताहित कर्म में प्रवृत्त होता है, जिसका परिणाम लौकिक सुख-दुःखादि हुआ करता है। और वे विचार 'अथर्वा' के परिणाम होते हैं। दूसरे शब्दों में 'अथर्वा' एवं मस्तिष्क का इस प्रकार अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है कि 'अथर्वा' के वर्ण से प्रभावित मस्तिष्क विकसित या जड़ीभूत होता है और मस्तिष्क के विकास अथवा जड़त्व के अनुकूल 'अथर्वा' का वर्ण निर्मित होता है।

यदि कोई व्यक्ति लाल रंग के मकान में रहे, लाल वस्त्र पहिने, कमरे के पर्दे—फर्श सब लाल रंग के बना ले, रात्रि में बिजली का बल्ब भी लाल हो लगा दे, भोजन में लाल वस्तुएँ, व्यवहार में लाल पदार्थ ही बराबर लेता रहे, तो स्वाभाविक है कि उसके चतुर्दिक् लाल वस्तुओं का रक्तवर्ण 'अथर्वा' उसके अपने 'अथर्वा' के रंग को प्रभावित किये बिना न रहेगा। किन्तु यहाँ एक बात सर्वदा ध्यान में रखना है। वह यह कि जड़-पदार्थों के 'अथर्वा' के रंग के द्वारा यदि चैतन्य अथर्वा का रग परिवर्तित किया गया तो वह रंग जड़त्व को भी साथ लायेगा। वैज्ञानिकों ने ये प्रयोग करके देखे हैं और वर्ण का अत्यधिक उपयोग मानसिक विकृति का कारण सिद्ध हुआ है—जो स्वाभाविक है।

भारतीय महर्षि उक्त तथ्य से अवगत थे। उन्होंने वाह्य जड़-पदार्थों के 'अथर्वा' का उपयोग केवल सहायक रूप में किया है।

वर्ण-परिवर्तन-पद्धति

यह पद्धति तीन साधनों पर आधारित है—(१) ध्यान, (२) वाक् और (३) वातावरण।

(१) ध्यान—विश्व में जो कुछ दृगेन्द्रिय का विषय है, वह सबका सब हम आँख बन्द कर ध्यान-रूप में देखने में समर्थ हैं। ध्यानस्थ पदार्थ का वर्ण क्या है? वस्तुतः वह प्रत्यक्ष विश्व में गोचर स्थूल वर्ण का सूक्ष्म रूप ही तो है। यदि विश्व में लाल रंग न हो, तो आप लाल रंग का ध्यान करने में क्या कभी समर्थ हो सकते हैं? जिस भी आकार को हम ध्यान में कल्पना-नेत्रों से देखते हैं, वह आकार वस्तुतः मूल वस्तु का सूक्ष्म रूप ही होता है। वस्तु का 'अथर्वा' वास्तव में उसका सूक्ष्म शरीर होता है। और ध्यान में हम वस्तु के सूक्ष्म रूप को ही प्रस्तुत करते हैं। दूसरे शब्दों में ध्यान में जिस पदार्थ का ध्यान कर रहे हैं, उसके 'अथर्वा' (सूक्ष्म शरीर) से अपने सूक्ष्म (कल्पना; मस्तिष्क) का सम्बन्ध स्थापित करते हैं। अनन्य चिन्तन की अवस्था प्राप्त होते ही हमारा 'अथर्वा' तद्रूप धारण कर लेता है। फलतः हम उन सब विशेषताओं से सम्पन्न हो जाते हैं, जो उस 'अथर्वा' एवं उसके वर्ण से सम्बन्धित हैं।

(२) वाक्—किन्तु ध्यान के द्वारा जब तक पूर्ण तन्मयता प्राप्त नहीं होती—जो जन-साधारण के लिये दुःसाध्य ही है तब तक 'अथर्वा' में परिवर्तन नहीं होता। इसी से ध्यान के साथ वाणी का प्रयोग

भी किया जाता है। वाक् के द्वारा विशिष्ट मन्त्र को आवृत्तियों के द्वारा ध्येय मूर्ति प्रत्यक्ष होती है। ईथर (वियत्) तत्व में उसी प्रकार की ध्वनि-तरंगों का उत्पादन ही श्रेयस्कर होता है, जिसके अनुकूल 'अथर्वा' (ध्येय आकृति) है। अन्यथा ध्यान कुछ और मन्त्र कुछ का कोई परिणाम नहीं होता।

मन्त्रसिद्धि का आशय है—शरीर के रोम-रोम से इष्ट-मन्त्र के जप का अनवरत अनुभव होने लगना। इसका पहला सोपान है श्वासोच्छ्वास के साथ स्वयमेव मन्त्र-जप होने लगना। मन्त्र-जप से 'अथर्वा' का परिवर्तन हो जाता है। मन्त्र-जप की तीन दशाएँ हैं। चौथी है मन्त्र-सिद्धि। पहली दशा वाचिक जप है, जिसमें साधक वाणी द्वारा जप करता है। वाणी द्वारा दीर्घकाल तक जप करने पर जप स्वभावतः उपांशु दशा को प्राप्त होता है। अर्थात् ध्वनि रहित केवल स्थूल वागेन्द्रिय के कम्पन के साथ जप सम्पन्न होता रहता है। दीर्घकाल तक उपांशु जप के फलस्वरूप साधक मानस जप की कोटि में पहुँचता है और जिह्वा-कण्ठादि का कम्पन समाप्त हो जाता है। जप बराबर चला करता है। इससे आगे बढ़कर मन्त्र-सिद्धि की पहली दशा में पहुँचता है। इस समय मन्त्र श्वासोच्छ्वास के साथ मिल जाता है और अन्तिम, मन्त्र को चरम सिद्धि में साधक मन्त्र-मय देहवाला हो जाता है।

आज के युग में पुस्तकीय विद्वान् मन्त्र-जप की तीन दशाओं—वाचिक, उपांशु और मानस को मन्त्र-जप के तीन प्रकार समझ बैठे हैं और सीधे ही मानस जप का प्रयास करने लगते हैं। कारण कि उन्होंने पढ़ा है कि वाचिक से शत-गुणित अधिक उपांशु और उपांशु से अनन्त गुणाधिक मानस जप होता है। फिर वाचिक या उपांशु जप करके समय नष्ट क्यों करें! कुछ लोग तो 'सोऽहम् हंसः' के अभ्यासी हैं, जो एकदम बिना प्रयास मन्त्र-सिद्धि की दशा में पहुँच श्वासोच्छ्वास के साथ मन्त्र-जप करने का आडम्बर करते हैं। एकदम सातवें आसमान पर छलांग भरनेवाले ये अबोध स्वयंभू गुरु वास्तव में तुलसी बाबा के शब्दों में—आपु गये अरु आनहिं घालहिं। जे कहुँ सतमारग प्रतिपालहिं॥

मन्त्र-देह (मन्त्र की चरम सिद्धि) या अजपा की दशा वाणी की सूक्ष्म दशा है। स्थूल से सूक्ष्म बलवत्-तर होता है। 'अथर्वा' की सूक्ष्मता को दृष्टि में रखते हुये यह सहज बोधगम्य है कि उसका परिवर्तन किसी सूक्ष्म शक्ति द्वारा ही सम्भव है। मन्त्र की अजपा अवस्था, जो मन्त्र-सिद्धि का पहला सोपान है, अपनी सूक्ष्मता की शक्ति से 'अथर्वा' को परिवर्तित करने में पूर्ण सक्षम होती है। ध्येय मूर्ति (अथर्वा) का ही, जो वाक्-रूप—मन्त्र है, उसी मन्त्र की सिद्धि—(अजपा दशा) हमारे 'अथर्वा' को परिवर्तित कर तद्रूप करने में सक्षम होगी। ध्येय 'अथर्वा'-भिन्न एवं वाक्-रूप (मन्त्र) भिन्न होने पर सब प्रयास बेकार होगा। ध्यान-सिद्धि किंवा मन्त्र-सिद्धि दो में से एक भी नहीं मिलेगी।

(३) वातावरण—ध्यान एवं मन्त्र-जप की सूक्ष्म चैतन्य क्रिया की सफलता के लिये बाह्य वातावरण तदनुकूल रखना चाहिये। जिन जड़ एवं अर्द्ध चैतन्य वस्तुओं का वर्ण हमारे ध्येय 'अथर्वा' के अनुकूल है, साधना-काल में उनका उपयोग स्वभावतः 'अथर्वा' के वर्ण-परिवर्तन में सहायक होता है।

अथर्वा, कुण्डलिनी और मा पीताम्बरा

कुण्डलिनी के प्रकाश का ही दूसरा नाम 'अथर्वा' है। कुण्डलिनी-जागरण और 'अथर्वा'-वर्ण-परिवर्तन दो भिन्न कार्य नहीं हैं। यह केवल शब्दों का फेर मात्र है।

विश्वाद्या शक्ति, भक्त-वाञ्छा-कल्पलता, महा-शक्ति कुण्डलिनी के प्रकाश का दूसरा नाम ही 'अथर्वा' है एवं वही महामाया कुण्डलिनी जब अपनी पीताभा का प्रसार करती है, तो **'सिद्ध-पीताम्बरा'** के नाम से अभिहित होती है।

• • •

पीताम्बरा

श्री राजेन्द्रलाल दास, विशारद, सुपौल (सहरसा)

शास्त्रों में 'पीताम्बरा' को दश-महाविद्या के अन्तर्गत कहा है। ये दश-महाविद्यायें सिद्ध-विद्यायें हैं। इनकी साधना में केवल सम्पूर्ण मन को देना है और कुछ नहीं अर्थात् श्रद्धा-भक्ति-समन्वित क्रिया करने से इनको प्राप्त करने में कुछ भी देर नहीं होती।

पीताम्बरा वगला रिपुओं का नाश करती हैं। साधक के जीवन में कामादि ही छः शत्रु हैं, जो पग-पग पर विघ्न डाला करते हैं और साधक को माँ तक पहुँचने से रोकते हैं। इन छः रिपुओं का नाश वगलामुखी जितना शीघ्र करती हैं, उतना शीघ्र कोई भी नहीं। काम्य कर्म में शीघ्र फल देनेवाली तो वे प्रसिद्ध ही हैं।

एक-वक्त्र महा-रुद्र की महा-शक्ति का नाम वल्गामुखी है, जो बाद में 'वगला'-नाम से प्रसिद्ध हुआ है।

निरुक्त-क्रमानुसार संस्कृत भाषा में जैसे 'हिंस' शब्द वर्ण-व्यत्यय के कारण 'सिंह' बन जाता है, उसी प्रकार निगमोक्त 'वल्गा' शब्द आगम में 'बगला'-रूप में परिणत हो गया है।

'अथर्वा' और **'अङ्गिरा'**—इन्हीं दो प्राणों से सारी सृष्टि जीवित है। प्राणियों के शरीर से **'अथर्वा'** नामक प्राण-सूत्र निकला करता है किन्तु प्राण-रूप होने से हम लोग उसे स्थूल रूप में देख नहीं पाते। यह एक प्रकार की 'वायरलेस टेलीग्राफी' है। सौ कोस दूर रहनेवाले आत्मीय के दुःख से यहाँ हमारा चित्त जिस परोक्ष शक्ति द्वारा व्याकुल कर दिया जाता है, उसी परोक्ष सूत्र का नाम **'अथर्वा'** है। इस शक्ति-सूत्र के विज्ञान से सहस्रों कोस दूर स्थित व्यक्ति का आकर्षण किया जा सकता है।

जगदम्बा की विचित्र लीला है। जैसे कोई पाहुन आनेवाला है, मुझे उसका ज्ञान नहीं होता किन्तु कौए को मालूम हो जाता है। इसी प्रकार जिस 'अथर्वा'-सूत्र को हम नहीं पहचानते, उसे श्वान पहचान लेता है। उसी शक्ति के ज्ञान से जमीन सूँघकर कुत्ता भागे हुये चोर का पता लगा लेता है, कारण भागते समय चोर ने अपने 'अथर्वा'-प्राण को रास्ते में छोड़ा है और वह प्राण मिट्टी में संक्रान्त हो गया है। वस्त्र, नख, केश, लोम आदि के द्वारा वह वासना-रूप से प्रतिष्ठित रहता है। इन वस्तुओं के आधार पर किसी व्यक्ति पर मनमाना प्रयोग किया जा सकता है। पुरा युग में भौम मनुष्य देवता इसी 'अथर्वा'-सूत्र के द्वारा असुरों पर कृत्या (मारण, मोहन, उच्चाटन आदि) का प्रयोग किया करते थे।

अथर्ववेद में घोराङ्गिरा और अथर्वाङ्गिरा नाम के दो भेद कहे हैं। इनमें घोराङ्गिरा में औषधि वनस्पति-विज्ञान है और अथर्वाङ्गिरा में अभिचार-प्रयोग है। मनु भी कहते हैं—

श्रुतिरथर्वाङ्गिरसीः कुर्यादिति यः विचारयेत्। वाक्-शास्त्रं वै ब्राह्मणस्य तेन हन्यादरीन् द्विजाः॥

उक्त 'अथर्वा'-सूत्ररूपा महाशक्ति का ही नाम 'वलगामुखी' या 'बगलामुखी' है (देखें शतपथ ब्राह्मण ३।५।४३) । इस महाशक्ति की आराधना करनेवाला मनुष्य अपने शत्रुओं को मनमाना कष्ट पहुँचा सकता है तथा निष्काम भाव से करने से अन्तर के शत्रुओं को सिर उठाने नहीं दे सकता है।

अपने भेदों सहित श्रीबगलामुखी, बाल भैरवी, त्वरिता, धनदा, महिषासुर-विनाशिनी और महालक्ष्मी—ये दक्षिणाम्नाय में कही गई हैं। अतः इनकी आराधना इसी आम्नाय के अनुसार करे।

पीला वस्त्र, पीला फल, पीली माला आदि इनकी आराधना में प्रयुक्त की जाती है।

इन्हीं बगलामुखी के अवतार कूर्म भगवान् थे। मुण्डमालिनी तन्त्र में यह उल्लेख है कि—

प्रकृतिर्विष्णु - रूपा च पुं - रूपश्च महेश्वरः । एवं प्रकृति - भेदेन भेदास्तु प्रकृतेर्दश ॥
कृष्ण-रूपा कालिका स्यात् राम-रूपा च तारिणी। बगला कूर्म-मूर्तिः स्यान्मीनो धूमावती भवेत् ॥

भगवती बगला के प्रसिद्ध ध्यान का भावार्थ निम्न प्रकार है—

सुधा कहते हैं अमृत को अर्थात् जिसका नाश कभी न हो, ऐसी सुधा के महा-समुद्र के मध्य में मणियों के मण्डप में सिंहासन पर माता बगला विराजमान हैं। पीला उनका वस्त्र है, माला का आभूषण है और एक हाथ से शत्रु की जिह्वा का अग्रभाग पकड़ हुई हैं तथा दूसरे दक्षिण हाथ से गदा के द्वारा उसे पीड़ित कर रही हैं। ऐसी जो दो भुजावाली पीताम्बरा हैं, उनका स्मरण करें।

इसका सूक्ष्म अर्थ है—ब्रह्म का प्रकाश ही यह विश्व है, जिसमें सभी जीव उस प्रकाश के एक-एक स्फुलिङ्ग हैं। इसी प्रकाश-रूपी महा समुद्र को 'सुधाब्धि' कहते हैं। कारण वह प्रकाश ही माया है, जो अनादि और अनिर्वचनीय है। उसी प्रकाश के मध्य में प्रकाश की घनीभूत अवस्था द्वारा सिंहासन का निर्माण होता है और उस पर भक्तों के लिये पीताम्बरा स्थित होती हैं। ईश्वर की जो ६ कलाएँ तन्त्र में वर्णित हैं, उनमें ये 'पीता' कला हैं। इसीलिये इनका वर्ण पीत है। इनका वस्त्र पीत है। माला का जो आभरण है, वह भी पीत है। साधक जब मन्त्र को चैतन्य कर लेता है, तब वह मन्त्र जिह्वाग्र पर आ बसता है। यही जिह्वा का अग्रभाग देवी द्वारा पकड़ना है और उसका धन-घन जप ही गदाभिघात है। चूँकि शुद्ध सत्य है, इसलिये उनमें कोई ऐश्वर्य नहीं है। अतः दो बाँहें हैं।

सन् १९३० में परमहंस रामकृष्णदेव की धर्म-पत्नी श्री श्री शारदा माँ मलेरिया से मुक्त हुई ही थीं और बहुत कमजोर थीं। चिकित्सकों की राय से दरवाजे पर शाम को धीरे-धीरे टहला करती थीं। उस ग्राम में एक पहलवान था, जो पागल हो गया था। वह बड़ा उग्र पागल था। जिसको देखता, उसी को मारने के लिये टूट पड़ता और मारता था। एक दिन श्री श्री मां जब टहल रही थीं, तब वह पागल आया और एक लकड़ी जलावन के ढेर से उठाकर माँ को मारने दौड़ा। पहले तो मां मार से बचने के लिये दौड़ती हुई चक्कर लगाने लगीं। फिर घूमकर उस पागल को एक थप्पड़ मारा। पागल गिर पड़ा और उसकी जिह्वा बाहर निकल आई। मां ने उसकी जिह्वा बाएँ हाथ से पकड़ ली और उसके सीने पर अपना ठेहुना अड़ा कर थप्पड़ से उसे मारने लगीं। तब तक लोग भी दौड़कर आ गये थे किन्तु सभी कुछ दूरी पर ही स्तम्भित होकर खड़े थे। कारण, उन लोगों ने देखा कि पागल नीचे पड़ा है और मां उसकी जिह्वा को पकड़ उसे मार रही हैं, किन्तु मां का देह, वस्त्र आदि सभी पीत प्रकाश से परिपूर्ण है और वह प्रकाश बाहर भी फैल रहा है तथा वह पागल भी पीतवर्ण का हो गया है। पागल शान्त हो गया। माँ ने उसे छोड़ दिया और हँसती हुई अपने कमरे में चली गईं। वह पागल भी उठा और अपने घर को चला गया। अगले दिन लोगों ने देखा, उसमें पागलपन का कुछ भी चिह्न नहीं है। बाद को तो वह पागल 'साधु' कहा जाने लगा और श्री श्री माँ का विशेष कृपापात्र रहा।

श्रीबगला-रहस्योद्घाटन

'कौलाचार्य' पण्डित काशीप्रसाद शुक्ल शास्त्री, अठसरायं, सिराथू (इलाहाबाद)

१—भगवती श्री बगला का आविर्भाव

सृष्टि के आदि-काल में केवल अन्धकार ही था। इस अन्धकार की कोई सीमा नहीं थी और न उसके स्वरूप को कुछ भी प्रतीति थी। चारों ओर शून्यता व्याप्त थी क्योंकि प्रलय-काल ने चौदह भुवनों सहित सारे ब्रह्माण्ड को ग्रस लिया था, कुछ भी शेष नहीं था।

निर्माण-क्रिया में प्रकाश परमावश्यक है। अन्धकार में कोई भी कार्य होना असम्भव है। इसलिये सबसे पहले मां आद्या काली का प्रादुर्भाव हुआ। उनका स्वरूप काला है किन्तु प्रकाश-जनक भी है। प्रकाश अन्धकार से ही निकलता है, अन्धकार में ही चमकता है और अन्धकार में ही लीन भी होता रहता है। इससे स्पष्ट है कि प्रकाश अन्धकार से छोटा है, वह स्वल्प-देश में व्याप्त होता है, जब कि तम (अन्धकार) बहु-देश-व्यापी अनन्त है और सभी ज्योतियों का आधार है। महाकाश में असंख्य तारे, ग्रह, उपग्रह, नक्षत्रादि चमकते रहते हैं, वे सभी इसी अन्धकार में अन्तर्हित रहते हैं।

मां काली परब्रह्म की स्फुरणा है, जिसे ब्रह्म की **'इच्छा'** माना गया है। इसी तत्व को ईक्षा, कामना और तप भी कहा गया है। वेदान्त-सूत्र में वेदव्यास जी ने **'ईक्षतेर्नाशब्दम्'**—इस सूत्र में इसे **'ईक्षा'** बताकर प्रकृति से भी परा **'चित्'** बताया है। यही आद्या शक्ति सभी देवी-देवताओं एवं अखिल जगत् का मूल है।

किसी भी निर्माण-क्रिया को सम्पादित करने के लिये उसके विधि-विधान के ज्ञान की आवश्यकता होती है, साथ ही प्रशान्त वातावरण भी अपेक्षित है। प्रलयान्त होने पर भी प्रखर प्रचण्ड वायु-प्रवाह से उद्वेलित असीम, अथाह जल-राशि को उचित रूप में सीमित करने के लिये ब्रह्म की 'ज्ञान'-स्वरूपिणी भगवती तारा का आविर्भाव हुआ। मां तारिणी निखिल ज्ञान-परम्परा एवं जीवनी-शक्ति-मय जल की अधिष्ठात्री ही नहीं, मूल कारण भी हैं। ताराम्बा का स्वरूप नीले वर्ण का है। नील-वर्ण ही जीवनी-शक्ति का स्रोत है। यजुर्वेद में उदयकालीन भगवान् भास्कर के आगमन को परिलक्षित कर निम्न मन्त्र कहा गया है—

'आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च हिरण्मयेन सविता रथेन देवोऽऽयाति भुवनानि पश्यन्।'

अर्थात् सब ओर से कृष्ण (नील) धूलि से व्याप्ति सविता देवता सुवर्ण-निर्मित रथ पर आरूढ़ होकर उस श्याम रज को, जो कि अमृत है, अपनी किरणों के द्वारा मृत्यु-लोक के प्राणियों की आत्माओं एवं शरीरों में प्रविष्ट करते हुये आ रहे हैं।

आकाश का वर्ण भी नीला ही है। आयुर्वेदीय चरक, सुश्रुतादि ग्रन्थों में भूतों के सृष्टि-प्रकरण में भी इसीलिये कहा है कि—

'तस्माद् वायोस्सकाशादग्निरग्नेर्जलं जलाद् भूमिस्तत्-सकाशादन्नमन्नात् प्रजाः।'

अर्थात् उससे वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से भूमि, भूमि से अन्न और अन्न से प्रजा उत्पन्न होती है।

ब्रह्म की '**इच्छा**' एवं '**ज्ञान**' के पश्चात् निर्माण-क्रियाओं को सम्पादन करने के हेतु तृतीय महा-विद्या षोडशाम्बा का प्रादुर्भाव हुआ, जिससे भगवान् विष्णु को परम '**क्रिया**' शक्ति प्राप्त हुई।

अब चिन्तनीय विषय यह था कि जब तक तत्कालीन वायु-प्रवाह में स्थिरता नहीं आती, तब तक सृजन-क्रिया में चिर-स्थायित्व होना असम्भव था क्योंकि सर्व-विनाशक वायु की चपेट में आकर समस्त विनिर्मित वस्तु-समूह विनष्ट हो जाता था। इस वात-क्षोभ के स्तम्भन के लिये पराम्बा श्रीत्रिपुर-सुन्दरी श्रीपोताम्बा के रूप में आविर्भूत हुईं। उन्होंने उक्त वात-क्षोभ को स्तम्भित किया, जिससे भगवान् विष्णु निश्चिन्त हुये।

इस प्रकार भगवती बगला दश-महा-विद्याओं में चतुर्थ श्रेणी में आती हैं और उनके आविर्भाव का हेतु सृष्टि-कार्य में आनेवाले विघ्नों का अवरोधन करना ही मुख्य है।

भगवती श्रीबगला के आविर्भाव के सम्बन्ध में तन्त्रोक्त विवरण में सौराष्ट्र के पीत ह्रद का उल्लेख हुआ है, जिस पर पाठकों के मन में प्रायः यह शंका उठती है कि सृष्टि के आदिकाल में, जब कि केवल जल ही सर्वत्र व्याप्त था, तब 'सौराष्ट्र' नामक भू-भाग का अस्तित्व ही कहाँ था? इस शङ्का का समाधान यह है कि मूलतः जहाँ श्री पीताम्बरा भगवती का आविर्भाव हुआ था, वहीं भविष्य में उक्त नाम के भू-भाग की अवस्थिति होगी, इसका पूर्व-ज्ञान तन्त्र के प्रणेताओं को हो जाना कोई विस्मय-जनक बात नहीं है। आर्ष ग्रन्थकारों की कृतियों में ऐसे भविष्य-सूचक विवरण प्रायः मिला करते हैं।

भगवती बगला ने केवल वायु का ही स्तम्भन नहीं किया, अपितु ब्रह्मा की सृष्टि में सृष्ट समस्त वस्तुओं की आधार-भूत भूमि की भी यही आधार हैं। इनके ही बल पर जल के ऊपर पृथिवी का सन्तरण-भ्रमण हो रहा है। इन्हीं की शक्ति से आकाश में सूर्यादि ग्रह, उप-ग्रह, नक्षत्रादि टिके हुये हैं और नियमित समयानुसार नियमित कक्षाओं में चिरकाल से विचरण कर रहे हैं। यही समस्त चराचर प्राणि-समूह की चित्-शक्ति कुण्डलिनी हैं, जिन्हें पौराणिकों ने निखिल ब्रह्माण्डों के परमाधार शेष, अनन्तादि नामों से वर्णित किया है।

२—ब्रह्मास्त्र-विद्या

पराम्बा बगला को '**ब्रह्मास्त्र-विद्या**' के नाम से क्यों जाना जाता है? इस विषय में अनेक कार्य-विषयक प्रयोग-पद्धतियों से ऐसा आभास मिलता है कि ऐहिक या पारलौकिक, देश अथवा समाज के दुःखद, दुरूह अरिष्टों एवं शत्रुओं के दमन-शमन में इनके समकक्ष अन्य कोई भी नहीं है। अतः ऐसा अवसर आने पर चिर-काल से साधक और असाधक-वर्ग भी इनका आश्रय लेता आ रहा है। आधुनिक काल में अल्पज्ञता के कारण प्रायः लोग इनके मन्त्र का प्रयोग मारण, उच्चाटन, राजकीय विवाद, मुकदमेबाजी आदि में ही करते हैं।

'**ब्रह्मास्त्र**'—शब्द की परिभाषा पर संस्कृतज्ञ साधकों एवं पाठकों को सोचना-समझना आव-श्यक है। '**ब्रह्म एव अस्त्रं ब्रह्मास्त्रं**' अर्थात् स्वयं ब्रह्म ही अस्त्र हो जाय। धनुर्वेद के आग्नेयास्त्र, वाय-व्यास्त्र, वरुणास्त्र, वैष्णवास्त्रादि जिन दिव्यास्त्रों का परिचय महाभारतादि ऐतिहासिक ग्रन्थों से हमें मिलता है, उनमें '**ब्रह्मास्त्र**' की सत्ता सर्वोपरि है क्योंकि पूर्वोक्त अस्त्रों में से प्रत्येक अस्त्र का दूसरा निरोधक या निवारक भी है किन्तु 'ब्रह्मास्त्र' का निरोधक कोई नहीं, केवल 'ब्रह्मास्त्र' ही हो सकता है।

५ हजार ८४ वर्ष पूर्व महाभारत-युद्ध के समय '**ब्रह्मास्त्र**' का ज्ञान भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, अर्जुन, भगवान् कृष्ण, अश्वत्थामा के अतिरिक्त अन्य किसी महारथी को नहीं था। गुरु द्रोणाचार्य ने

दूर-दर्शिता-वश अपने पुत्र अश्वत्थामा को इस विषय में अधूरा ही रखा था क्योंकि उन्हें विश्वास था कि 'हमें तथा हमारे पुत्र को दुर्योधन की ओर से लड़ना पड़ेगा और दुर्योधन असन्मार्गी है, उसकी पराजय निश्चित है। पाण्डव सन्मार्गी हैं, उनके सलाहकार स्वयं केशव होंगे, अतः अर्जुन के निमित्त से पाण्डव विजयी होंगे। तव दुर्योधन के प्रेम-वश्य होने से हमारा पुत्र इस दिव्यास्त्र का दुरुपयोग करेगा।'

युद्धान्त की रात्रि वीतने पर दूसरे दिन अश्वत्थामा ने ऐसा किया भी था, जिसका कटु परिणाम भी उन्हें भगवान् श्रीकृष्ण के शाप से चिर-काल तक भोगना पड़ा।

'शस्त्र' कहते हैं लौह आदि धातु, उप-धातुओं से निर्मित घातक यन्त्र-विशेष को, जैसे वाण, तलवार, परिघ, फरसा, भाला आदि, जो हाथ से चलाये जाते हैं। **'अस्त्र'** वे कहे जाते हैं, जिनका प्रयोग किसी देवता-विशेष की मन्त्र-साधना की सिद्धि से सम्पन्न होता है। मन्त्र-सिद्धि के पश्चात् उस देवता से साधक को यह वर लेना होता था कि किसी शस्त्र में प्रविष्ट होकर वह देवता साधक के शत्रु का संहार करे। ऐसे 'अस्त्र' का प्रयोग वह युद्ध-काल में भी प्राण-संकट के बिना नहीं करता था। तभी उसकी अमोघता सुरक्षित वनी रहती थी। दिव्यास्त्रों की प्रयोग-विधि का नियम भी यही था और यह भी कि दिव्यास्त्र का प्रयोग शून्य पर भी न किया जाय।

दिव्यास्त्रों में **'ब्रह्मास्त्र'** इसलिये सर्वोत्तम है कि समस्त देव-समुदाय ब्रह्म की ही विभूति है। ब्रह्म की सत्ता-महत्ता अपरिमेय, अनादि, अनन्त, असीम है—जव कि विभूति-मय देवों की सत्ता सीमित, आदि और अन्त से युक्त है।

देव एवं उनकी शक्तियाँ ब्रह्म-शक्ति के अंश मात्र हैं। देवों और उनकी शक्तियों को ब्रह्म एवं ब्रह्म-शक्ति की निरन्तर अपेक्षा वनी रहती है। सभी देव सशक्त ब्रह्म की प्रेरणा से ही अपने-अपने कार्य में लगे रहते हैं। वही परब्रह्म-स्वरूपिणी पराम्बा शत्रु-संहारिणी स्तम्भिनी भगवती पीताम्बरा हैं। अतः **'ब्रह्मास्त्र-विद्या'** के नाम से उनकी ख्याति सर्वथा सार्थक है। शस्त्रास्त्र-विज्ञान 'धनुर्वेद' की जननी जगदम्बिका **'स्थिति-रूपा च पालने'** कही गई भगवती बगलामुखी पीताम्बरा ही हैं।

क्रान्ति को दमन करनेवाली शक्ति ही शान्ति की संस्थापिका होती है। महाविद्या बगला लौकिक वैभव की दात्री होने के साथ ही अपने भक्तों के काम, क्रोध, लोभ, मात्सर्य, मोह, ईर्षादि शत्रुओं का दमन भी करती है। साधना के सभी विघ्नों को निरस्त कर साधकों के मन-बुद्धि पर अपना प्रभाव डालकर वह अपनी ओर आकृष्ट करती है। अत्यल्प-काल में ही आशु-सिद्धिदा होने से भगवती बगला अपने भक्तों को सभी लौकिक सम्पदाओं से सम्पन्न कर अन्त में उसे अपना सान्निध्य एवं मोक्ष प्रदान करती है।

३—भगवती बगला का ध्यान और बीज-मन्त्र

किसी भी देवता के **'ध्यान'** को समझकर उसका समुचित रूप से ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। 'ध्यान' के अनुसार चिन्तन, अभ्यास के दृढ़ होने पर ही निखिल पुरुषार्थ की सिद्धि होती है। इसी से कहा है कि—

'ध्यानं विना भवेन्मूकः सिद्ध - मन्त्रोऽपि साधकः।'

अर्थात् ध्यान के बिना सिद्ध-मन्त्र-साधक भी गूँगा ही रहता है, उसमें मन्त्र-सिद्धि का कुछ भी प्रकाश नहीं होता।

भगवती बगलामुखी का मुख्य ध्यान है—**'सौवर्णासन-संस्थितां'** इत्यादि, जिसका भावार्थ निम्न प्रकार है—

सुवर्ण के आसन पर स्थित तीन नेत्रवाली, पीताम्बर से उल्लसित, सुवर्ण की भाँति कान्ति-मय अङ्गोंवाली, जिनके मणि-मय मुकुट में चन्द्र चमक रहा है, कण्ठ में सुन्दर चम्पा पुष्प की माला शोभित है, जो अपने चार हाथों में १ गदा, २ पाश, ३ वज्र और ४ शत्रु की जीभ ग्रहण किये हैं, दिव्य आभूषणों से जिनका सारा शरीर भरा हुआ है—ऐसी तीनों लोकों का स्तम्भन करनेवाली श्रीबगलामुखी की मैं चिन्ता करता हूँ।

वैदिक साहित्य में जो स्तम्भन-तत्व माना गया है, वही यहाँ शक्ति-तत्व **'बगलामुखी'** नाम से प्रसिद्ध है। शिव-शक्त्यात्मक पर-तत्व का प्रकाशक शब्द-तत्व है, जिससे मन्त्रों का आविर्भाव और देवता-स्वरूप का ज्ञान होता है। उक्त शब्द-तत्त्व पराख्या वाणी-रूप से मूलाधार चक्र द्वारा उत्पन्न होता है, वह वाणी सत्य को सदा धारण करती है, जिसे भाष्यकार भगवान् पतञ्जलि ने **'ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा'** कहा है। १ परा, २ पश्यन्ती, ३ मध्यमा और ४ वैखरी—इन संज्ञाओं से वही चार प्रकार की है। भगवती बगला के चार हाथ इन्हीं के द्योतक हैं। हाथों में जो चार शस्त्र हैं, वे उनके प्रभाव के सूचक हैं। यथा—

१ **'गदा'** व्यक्त वचन के अर्थ की सूचक है, जैसा कि इस शब्द की व्युत्पत्ति से स्पष्ट है—**गद् व्यक्तायां वाचि।**

२ **'वज्र'**—वाणी-रूप वज्र होता है। यथा—**'स वाग्-वज्रो यजमानं हिनस्ति।'**

३ **'पाश'**—मधुरादि गुणों से वह युक्त है, जिनसे बड़े-बड़े साधक भी बँध जाते हैं।

४ **'जिह्वा'**—दुर्वाक्य है, जो वरुण-देवात्मक है। यथा—**'वरुणो वा एष दुर्वाग् उभयतो यदक्षः'** इस श्रुति-वाक्य में **'अक्ष'** से **'अ'** से **'क्ष'** तक के वर्णों का ग्रहण होता है। उच्चारण आदि दोष-दूषित **'वरुण'** शब्द **'वृणु'** धातु से बनता है, जिससे कुत्सित शब्दों का तात्पर्य है।

भगवती बगला के ध्यान में **'जिह्वा ग्रहण'** प्रायः सर्वत्र पाया जाता है। इससे वाक् इन्द्रिय और रस के ग्रहण—इन दोनों के सम्यक् संयम का बोध होता है। जिह्वा के संयम से ही **'काम'** को जीता जाता है और वाक् के संयम से वाग्मित्व की प्राप्ति होती है। उक्त दोनों के नियन्त्रण से समस्त दोष विलीन होते हैं।

'चत्वारि वाक्-परिमितानि पदानि'—इत्यादि मन्त्र से ऐसा प्रकट होता है कि **'पाश'** शब्द से लज्जा, घृणा, भय आदि प्रसिद्ध पाशों का बोध होता है क्योंकि इनसे बन्धनात्मक भाव सिद्ध होता है।

'पीत-वर्णा' से माङ्गलिक रक्षात्मक तत्त्व का ग्रहण होता है क्योंकि भगवती का बीज रक्षात्मक है। यथा—

'हकारेकार-पृथिवी-नाद-विन्दु-समन्वितं बीजं रक्षा-मयं प्रोक्तं मुनिभिर्ब्रह्म-वादिभिः।'

अर्थात् 'ह ई ल् ँ' मिलकर बने **'ह्लीँ'** बीज को ब्रह्म-वादी मुनियों ने रक्षा-मय कहा है।

'पीत वर्ण' पृथिवी का है। इससे स्थिरता का बोध होता है, इसी से इस बीज को स्थिर-माया, स्तब्ध-माया, स्थिरा-मुखी कहा जाता है।

'पीत वस्त्र' छन्दों के द्योतक हैं क्योंकि वस्त्र और छन्द दोनों ही आच्छादन करते हैं।

'स्वर्ण-कुण्डल' भोग और मोक्ष के परिचायक हैं।

'रत्न-गुम्फित माला' अनेक ऐश्वर्यों की सूचिका है।

'मुकुट' परम पद का सूचक है।

'चन्द्र' षोडश कलाओं का द्योतक है।

'नेत्र-त्रय' चन्द्र, अग्नि और सूर्य तथा जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाओं के बोधक हैं।

रहस्योक्त '**दक्षिणे पुरतः सिंहः**' अर्थात् दक्ष-भाग में या सामने अवस्थित '**सिंह**' से धर्म का तात्पर्य है।

इस प्रकार मन्त्रार्थ-भावना के साथ ध्यान करते हुये जप करने से भगवती पीताम्बरा बगला की चामत्कारिक कृपा का अनुभव साधक सहज ही करता है।

४ श्रीबगला की उपासना

यह विद्या '**ऊर्ध्वाम्नाय**' के अनुसार उपास्या है। इस आम्नाय में शक्ति सर्वथा पूज्य मानी जाती है, भोग्य नहीं। 'श्रीकुल' की सभी महा-विद्याओं की साधना में साधक को गुरु के सान्निध्य में रहकर सतर्कता से इन्द्रिय-निग्रह-पूर्वक साधना-पथ पर अग्रसर होते हुये सफलता की प्राप्ति होने तक प्रयत्नपूर्वक रहना पड़ता है। '**कार्यं साधयामि शरीरं वा पातयामि**' अर्थात् चाहे शरीर नष्ट क्यों न हो जाय, कार्य को अवश्य सिद्ध करूँगा—ऐसा दृढ़-प्रतिज्ञ जब तक साधक न होगा, तब तक देवता की कृपा प्राप्त करना असम्भव है। यही आत्म-समर्पण की उच्च भावना है। पुरश्चरण पूर्ण होने तथा माँ की दया प्राप्त होने पर भी साधक को अपनी साधना की साध्य से जोड़नेवाली परम्परा को कभी शिथिल नहीं होने देना चाहिये— यही '**ऊर्ध्वाम्नाय**' की उच्च कोटि की साधना का गूढ़ रहस्य है।

श्री बगला शक्ति की उपासना वैदिक रीति से ब्रह्मा ने की और सृष्टि रचने में समर्थ हुये। उन्हीं ने सनकादि मुनियों को विद्या का उपदेश किया। सनत्कुमार ने नारद को, नारद मुनि ने सांख्यायन नामक परमहंस को बताया। सांख्यायन ने ३६ पटलों का तन्त्र ही रच दिया।

दूसरे उपासक हुये भगवान् विष्णु, जिनका वर्णन स्वतन्त्र तन्त्र और सहस्रनामों में मिलता है।

तीसरे उपासक भगवान् शिव ने परशुराम को ब्रह्मास्त्र-विद्या का उपदेश किया। जमदग्नि-पुत्र राम ने द्रोणाचार्य को और द्रोण ने अपने पुत्र अश्वत्थामा को यह विद्या बताई। ब्राह्मण-वेष-धारी कर्ण को भार्गव राम ने सिखाया। च्यवन मुनि को भगवान् शिव ने ही यह विद्या प्रदान की, जिन्होंने अश्विनीकुमारों को यज्ञ का अधिकार देने के समय देवराज इन्द्र के क्रोधित होने पर उनके वज्र को स्तम्भित कर दिया था। श्री हनुमान जब सूर्य को निगलने चले थे, तब पवन देव ने स्तम्भन का प्रभाव दिखाया था।

रावण-पुत्र मेघनाद ने हनुमान को बाँध कर लङ्का में उनकी गति को इसी शक्ति के बल पर अवरुद्ध किया था। अङ्गद ने रावण की सभा में अपना पैर जमा दिया था, जिसे उठाने में कोई सक्षम नहीं हुआ था। शक्ति की चोट से रण-भूमि में गिरे हुये लक्ष्मण को रावण नहीं उठा पाया था।

द्वापर युग में योगेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण ने जयद्रथ बध के लिये सूर्य का स्तम्भन किया था। श्रीमद् गोविन्दपाद की समाधि में विघ्न डालनेवाली रेवा नदी की धारा का स्तम्भन श्री भगवत्पाद श्री शङ्कराचार्य द्वारा हुआ था। महा-मुनि श्री निम्बार्क ने नीम वृक्ष के ऊपर सूर्य का दर्शन एक परि-व्राजक को कराया था।

श्री भगवती पीताम्बरा के उपासकों के विषय में उक्त प्रकार विविध ऐतिहासिक वर्णन आर्य ग्रन्थों में मिलता है, जो एक स्वतन्त्र ही शोध का विषय है।

श्रीबगलोपासना से ब्रह्म-साक्षात्कार

ब्रह्मत्व ही जीवन का स्वरूप है, क्योंकि जीव तो ब्रह्म ही से उत्पन्न ब्रह्म का अंश है। इसी से जीव की ब्रह्म-स्मृति क्षीण होने पर भी किसी अवस्था में लुप्त नहीं होती। अन्तर की इस सुप्त (सोई) चेतना को जो जगाती है, वही है **'बगला-शक्ति'**।

वैरी की जिह्वा अर्थात् विरुद्ध तामसिक शक्ति को विचूर्ण कर यही सुप्त आत्म-चेतना को जगा देती है। दूसरे शब्दों में जीवन की व्यष्टि-चेतना को जिसने छल कर इस कुम्भी-पाक में गिराया है, उसी वैरी को—उसी शत्रु-जिह्वा को—वाक्-शक्ति को जो निरुद्ध कर देती है; अन्तर की कामना-वासना को मर्दित कर सारी आसुरिक वृत्ति को छिन्न-भिन्न कर आत्म-चेतना को जगाकर जो सत्पथ दिखा देती है, वही है भगवती बगला।

'बुद्धिं नाशय' अर्थात् इस विपरीत बुद्धि का, इस लक्ष्य-भ्रष्ट उद्भट बुद्धि का नाश करो।

'जिह्वां कीलय कीलय', अर्थात् अनेक कुवाक्य यह रसना (जीभ) बोलती आई है, अनेक कुखाद्य यह रसना ग्रहण कर चुकी है, फिर यही रसना तुम्हारे पवित्र नाम का उच्चारण करेगी, तुम्हारा प्रेमामृत पान करेगी। इसी से कहता हूँ कि जितनी दुष्ट वृत्तियाँ हैं—देह में, मन में, प्राण में, उन समस्त दुष्ट-वृत्तियों की जिह्वा को कीलित करो।

भगवती बगला के दिव्य मन्त्र की उच्च भावना से प्रकट है कि इनकी उपासना से सुप्त ब्रह्म-चेतना जाग्रत् होकर उपासक मानव ब्रह्म का साक्षात्कार करने में सफल होता है।

भौतिक कामनाओं की सिद्धि में तो बगला की महिमा लोक-प्रसिद्ध ही है। मेरे एक व्यवसायी मित्र सर्वस्व-हीन से हो गये थे। भगवती बगला का अनुष्ठान कराकर वे पुनः बहुत वैभवशाली हो गये। इसी प्रकार मेरे एक अन्य मित्र ने इनकी उपासना के बल से धारा-सभा के चुनाव में सफलता प्राप्त की।

इस प्रकार शाक्त-धर्म की यह प्रसिद्ध उक्ति महाविद्या श्री बगला की उपासना के सबन्ध में पूर्णतया चरितार्थ है—'श्रीसुन्दरी-पूजन-तत्पराणां, भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव।'

—**'धर्म-रत्न' डा० वल्लभदास बिन्नानी 'व्रजेश', कलकत्ता**

बगलामुखी पटलः

काव्य-कण्ठ' श्री वशिष्ठ गणपति मुनि

बगलामुखीं व्याख्यास्यामः।
अष्टमी सा दशसु महाविद्यासु।
स्तम्भन - शक्तिर्बगलामुखी ॥
अध्यात्मं सा शङ्खिन्यां नाड्याम्।
अधि-लोकं पितृयाने पथि।
दण्ड-नाथा काचन मध्यमाया अधिदैवतं।
रिपु-स्तम्भन-कामो बगलामुखीमुपासीत।
अन्तः शत्रु-स्तम्भन-कामो वा।

खेन्द्राग्नि-शान्ति-चन्द्रैः संयुक्तैः।
शुद्धमुपासनमिन्द्र-योनि-विद्यया।
इन्द्र-योनिश्च जिह्वा-मूले लम्बमानं तैजसलिङ्गं।
तल्लक्ष्य-ध्यानं तद्विद्या।
अन्तर्वायु-सञ्चार-निरोधेन वा।
तं हठयोगमाहुः।
यो वायुं स्तम्भयेत् स सर्वं स्तम्भयेत्।

श्रीबगला-सम्बन्धी दो उपनिषत्

[१]

ॐ अथारि-मोचिनीं पीतां प्रणमामि, यां ब्रह्म-पत्नीं ब्रह्माणीं पीतां भास्वत्-तनुमिवाराध्यमानो निपतति शिरः यद् द्वेष्टि कुलं पुरुषं परि-तापयति संनक्ष्यमानो निपतति।

अर्थ : शत्रु-संहारिणी पीताम्बरा को मैं प्रणाम करता हूँ। पीत-वर्ण के शरीर वाली जिस ब्रह्म-पत्नी, ब्रह्माणी की आराधना करते हुए जो सिर झुकाता है, उससे द्वेष करने-वाले परिवार को, व्यक्ति को वह भगवती सन्तप्त करती है, और वह परिवार या व्यक्ति नष्ट होता हुआ पतन को प्राप्त करता है।

यः पीतामनुस्मरति स सर्वज्ञतामेति। अथ ह मणि-बन्धे पुरुष-चतुष्टय-ज्ञान-वर्तिनीं शरणमहं प्रपद्ये।

अर्थ : जो पीताम्बरा का स्मरण करता है, वह सर्वज्ञता प्राप्त करता है। धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष-रूप पौरुष-चतुष्टय को कर-कमलों से प्रदान करनेवाली पीताम्बरा की शरण मैं प्राप्त करता हूँ।

यन्नितान्तमाविष्करोति विद्विषः सेयं पीतावयवैः पूज्या।

अर्थ : जो छिपे हुए शत्रु को नष्ट कर देती है, वह पीताम्बरा पीले उपचारों द्वारा पूज्या है।

यो यं कालात्मको बोधः संसारमनु-मर्दयति शत्रुः स लुप्यते।

अर्थ : जो शत्रु संसार का मर्दन करता है, जिसे काल की आत्मा का ज्ञान नहीं है, वह लुप्त (नष्ट) होता है।

यच्चिन्तनीया तच्चिन्तयामि तच्चिन्तयामि तद्-भावयामि।

अर्थ : जो चिन्तनीय है, उसकी मैं चिन्ता करता हूँ, चिन्ता करता हूँ, भावना करता हूँ।

तारं मायां तदनु बगलामुखि सर्व-दुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय कीलय बुद्धिं नाशयेति पदं तारं मायां वन्हि-वल्लभान्तम् जपन्नरीन् प्रोच्चाटयति प्रोत्साद-यति इत्थं वेदेष्वागमेषु प्रसिद्ध-मूर्तिं बगलां श्रद्धामि।

अर्थ : 'ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय कीलय बुद्धिं विनाशय ॐ ह्लीं स्वाहा'—इसे जपता हुआ शत्रुओं को उच्चाटित करता है, नष्ट करता है, ऐसी वेदों में—आगमों में प्रसिद्ध-मूर्ति बगला की मैं श्रद्धा करता हूँ।

यः श्रावयति सूनृतया गिरा तद्-द्वेष्टॄ उच्चाटनयैव कल्पेरन्।

एषा तामसी-शक्तिरित्याह भगवान् कालाग्नि-रुद्रः।

अर्थ : जो इस उपनिषत् को पवित्र वाणी से सुनाता है, उसके शत्रु का अवश्य उच्चाटन होगा। यह तामसी शक्ति है, तामसी शक्ति है, राजसी शक्ति है, राजसी शक्ति है, ऐसा कालाग्नि रुद्र ने कहा है।

[२]

ॐ सह नावतु, सह नौ भुनक्तु, सह वीर्यं करवावहै, तेजस्विनावधीतमस्तु, मा विद्विषावहै। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

अर्थ : ॐ हम सबकी एक साथ रक्षा हो, हम एक साथ भोजन करें, सब मिलकर पराक्रम करें, हम सब तेजस्वी बनें, किसी से द्वेष न करें, ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

ॐ अथ हैनां ब्रह्म-रन्ध्रे सुभगां ब्रह्मास्त्र - स्वरूपिणीमाप्नोति। ब्रह्मास्त्रां महा-विद्यां शाम्भवीं सर्व-स्तम्भ-करीं सिद्धां चतुर्भुजां। दक्षाभ्यां कराभ्यां मुद्गर-पाशौ, वामाभ्यां शत्रु-जिह्वा-वज्रे दधानां। पीत-वाससं पीतालङ्कार-सम्पन्नां दृढ-पीनोन्नत-पयोधर-युग्माढ्यां। तप्त-कार्तस्वर-कुण्डल-द्वय-विराजित-मुखाम्भोजां, ललाट-पट्टोल्लसत् पीत-चंद्रार्धमनु-बिभ्रती-मुद्यद्-दिवाकरोद्योतां, स्वर्ण-सिंहासन-मध्य-कमल-संस्थां। धिया संचिन्त्य, तदुपरि त्रिकोण-षट्कोण-वसुपत्र-वृत्तान्तः षोडश-दल-कमलोपरि भू-बिम्ब-त्रयमनुसन्धाय, तत्राद्य-योन्यन्तरे देवीमाहूय ध्यायेत्।

अर्थ : अब इस सुन्दरी, ब्रह्मास्त्र-स्वरूपिणी, ब्रह्मास्त्र महा-विद्या, शाम्भवी, सर्व-स्तम्भ-करी, सिद्धा, चतुर्भुजा को, जो दक्ष करों में मुद्गर और पाश, वाम करों में शत्रु-जिह्वा और वज्र-धारिणी है तथा पीत-वस्त्रा, पीतालङ्कार-युता, दृढ़-पीनोन्नत-कुचा, तप्त काञ्चन-कुण्डल-द्वय-शोभित-मुखाम्बुजा, ललाट में पीतार्ध-चन्द्र-धारिणी, उदित-दिवाकर-समा, स्वर्ण-सिंहासन पर कमल-मध्य-संस्थिता को ब्रह्मरन्ध्र में बुद्धि-पूर्वक चिन्तन करे। उस (ब्रह्म-रन्ध्र) के ऊपर त्रिकोण, षट्कोण, अष्ट-दल-कमल, वृत्त, षोडश-दल कमल एवं तीन भू-गृहों का अनुसन्धान करके, उस (मण्डल के) आदि-योनि (त्रिकोण) के मध्य में देवी बगला का आवाहन करके ध्यान करे।

योनिं जगद्-योनिं स-मायमुच्चार्य, शिवान्ते भूमाग्र-बिन्दुमिन्दु-खण्डमग्नि-बीजं, ततो वर्णाङ्क-गुणार्णं त्रि-युतं स्थिरामुखि इति सम्बोध्य, सर्व-दुष्टानामिदं चाभाष्य, वाचमिति मुखमिति पदमिति स्तम्भयेति चोच्चार्य, जिह्वां वैशारदीं कीलयेति बुद्धिं विनाशयेति प्रोच्चार्य, भू-मायां वेदाद्यं ततो यज्ञ-भू-गुहायां योजयेत् ।

अर्थ : 'ऐं ह्लीं स्थिरामुखि ! सर्व-दुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा' (वर्ण =४ ×गुण =३×३ =३६ अक्षर) अर्थात् हे स्थिरामुखि ! सब दुष्टों के वचन, मुख, पद का स्तम्भन करो; वैशारदी जिह्वा का कीलन करो, बुद्धि का विनाश करो—इस मन्त्र का जप करे ।

स महा-स्तम्भेश्वरः सर्वेश्वरः, स सेना-स्तम्भं करोति । किं बहुना विवस्वद्-धृति-स्तम्भ-कर्ता सर्व-वात-स्तम्भ-कर्तेति किं दिवा-कर्षयति स सर्व-विद्येश्वरः सर्व-मन्त्रेश्वरो भूत्वा पूजाया आवर्तनं त्रैलोक्य-स्तम्भिन्याः कुर्यात् ।

अर्थ : ऐसा करनेवाला महान् स्तम्भेश्वर और सर्वेश्वर होता है । वह सेना का स्तम्भन करता है । अधिक क्या वह सूर्य की गति का स्तम्भन-कर्ता, समस्त वायु का स्तम्भन-कर्ता और दिन का आकर्षक होता है । वह सर्व-विद्येश्वर, सर्व मन्त्रेश्वर होकर त्रैलोक्य-स्तम्भिनी की पूजा का आवर्तन करता है ।

अङ्गमाद्यं द्वारतो गणेशं वटुकं योगिनीं क्षेत्राधीशं च पूर्वादिकमभ्यर्च्य, गुरु-पंक्तिमीशासुरान्तमन्तः-प्राच्यादौ क्रमानुगता मङ्गला, स्तम्भिनी, जृम्भिणी, मोहिनी, वश्या, अचला, चला, दुर्धरा, अकल्मषा, धीरा, कलना, काल-कर्षिणी, भ्रामिका, मन्द-गमना, भोगदा, योगिका । ह्यष्ट-दलानुगताः पूज्याः—ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, नारसिंही, चामुण्डा, महालक्ष्मीश्च, षड्-योनि-गर्भान्ता डाकिनी, राकिनी, लाकिनी, काकिनी, शाकिनी, हाकिनी वेदाद्य-स्थिर-मायायाः समभ्यर्च्य, शक्राग्नि-यम-निर्ऋति-वरुण-वायव्य-धनदेशान-प्रजापति-नागेशाः परिवाराभिमताः स्थिरादि-वेदाद्याः सवाहनाः सदस्त्रका बाह्यतोऽभ्यर्च्य, तां योनिं रति-प्रीति-मनोभवाः एताः सर्वाः समाः पीतांशुका ध्येयाः ।

अर्थ : इस पूजा का आद्य अंग इस प्रकार है कि द्वार पर पूर्वादि-क्रम से गणेश, वटुक, योगिनी और क्षेत्रपाल की पूजा करे । बिन्दु के ईशान कोण से अग्निकोण तक गुरु-पंक्ति की और अन्दर पूर्वादि-क्रम से १ मङ्गला, २ स्तम्भिनी, ३ जृम्भिणी, ४ मोहिनी, ५ वश्या, ६ अचला, ७ चला, ८ दुर्धरा, ९ अकल्मषा, १० धीरा, ११ कलना, १२ काल-कर्षिणी, १३ भ्रामिका, १४ मन्द-गमना, १५ भोगदा (भाविका), १६ योगिका की षोडश दलों में पूजा

करे। अष्ट-दलों में १ ब्राह्मी, २ माहेश्वरी, ३ कौमारी, ४ वैष्णवी, ५ वाराही, ६ नारसिंही, ७ चामुण्डा, ८ महालक्ष्मी की और छः त्रिकोणों के मध्य में १ डाकिनी, २ राकिनी, ३ लाकिनी, ४ काकिनी, ५ शाकिनी, ६ हाकिनी की 'ॐ ह्लीं' मन्त्र से पूजा करके १ इन्द्र, २ अग्नि, ३ यम, ४ निर्ऋति, ५ वरुण, ६ वायु, ७ कुबेर, ८ ईशान, ९ प्रजापति, १० नागेश (अनन्त)—इन दश दिक्-पालों की सपरिवार सवाहन अस्त्र-सहित भूगृह के बाह्य भाग में 'ॐ ह्लीं' से पूजा करे। त्रिकोण के तीनों कोणों में रति, प्रीति और मनोभवा की पूजा करे। इन सबको पीत-वस्त्र पहने ध्यान करे।

तदन्त-मूलायां दलादि-षोडशानुगताः पूज्याः नीराजनैः सहैश्वर्य-युक्तो भवति। य एनां ध्यायति, स वाग्मी भवति। सोऽमृतमश्नुते, सर्व-सिद्धि-कर्ता भवति, सृष्टि-स्थिति-संहार-कर्ता भवति। स सर्वेश्वरो भवति। स तु ऋद्धीश्वरो भवति। स शाक्तः, स वैष्णवः, स गणपः, स शैवः, स जीवन्मुक्तो भवति। स संन्यासी भवति, न तु मुण्डित-मुण्डः। षट्त्रिंशदस्त्रेश्वरो भवेत्, सौभाग्यार्चनेनेति प्रोतं वेद ॐ शिवम् सह नाववतु इति मन्त्रेण शान्तिः।

अर्थ : नीराजन के सहित ऐसी पूजा करनेवाला साधक ऐश्वर्यवान् होता है। जो इनका ध्यान करता है, वह विद्वान् होता है। वह दीर्घ-जीवी होता है, सर्व-सिद्धि-कर्ता होता है, सृष्टि-स्थिति-संहार-कर्ता होता है, वह सर्वेश्वर होता है। वह ऋद्धीश्वर होता है। वह शाक्त, वैष्णव, गणप, शैव, जीवन्मुक्त होता है। वह केवल मुण्डित-मुण्ड न होकर वास्तविक संन्यासी होता है, सौभाग्य-अर्चन से छत्तिस अस्त्रों का अधीश्वर होता है, ऐसा वेद में कहा गया है। 'ॐ शिवं सह नाववतु', इस मन्त्र से शान्ति हो। इति पीताम्बरोपनिषद्।
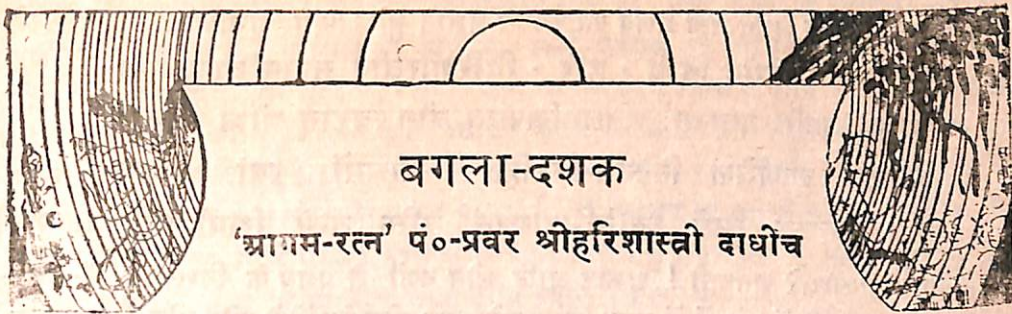
बगला-दशक

'आगम-रत्न' पं०-प्रवर श्रीहरिशास्त्री दाधीच

प्रस्तुत 'बगला-दशक' स्तोत्र में पाँच मन्त्र बगला विद्या के सुख-साध्य और सुशीघ्र फल-दायी हैं। इन मन्त्रों में एक बगला के 'मन्दार' मन्त्र नाम से प्रसिद्ध है। यह मन्त्र हमें अपने एक मित्र के घर प्राचीन लिखित पुस्तक के पत्रों के बीच एक पत्र में मिला। हमने भी इसे अनुभव में लिया। बराबर सफलता पाई।

उक्त स्तोत्र में मन्त्र तो पाँच हैं, पर उनके विषय में मन्त्रोद्धार तथा फल-समेत दस पद्य होने के कारण 'बगला-दशक' नाम दिया है।

सुवर्णाभरणां देवीं पीत - माल्याम्बरावृताम् ।
ब्रह्मास्त्र-विद्यां बगलां वैरिणां स्तम्भिनीं भजे ॥

मैं सुवर्ण के बने सर्वाभरण पहने हुये तथा पीले वस्त्र और पीले पुष्प (चम्पा) की माला धारण करनेवाली एवं साधक के वैरियों का स्तम्भन करनेवाली ब्रह्मास्त्र विद्या-स्वरूप बगला विद्या भगवती को भजता हूँ।

बगला के मूल विद्या-स्वरूप का विवेचन—

यस्मिल्लोका अलोका अणु-गुरु-लघवः स्थावरा जङ्गमाश्च ।
सम्प्रोताः सन्ति सूत्रे मणय इव बृहत्-तत्वमास्तेऽम्बरं तत् ।
पीत्वा पीत्वैक-शेषा परि-लय-समये भाति या स्व-प्रकाशा ।
तस्याः पीताम्बरायास्तव जननि ! गुणान् के वयं वक्तुमीशाः ॥ १ ॥

हे जननि ! जिसमें ये लोक, जो दृश्य—दीखने योग्य हैं और 'अलोक, जो अदृश्य—न दीखने योग्य हैं (ऐसे बहुत से पदार्थ और जीवादि तत्व हैं, जो मानव दृष्टि में नहीं आते हैं परन्तु अवश्यमेव अपनी सत्ता सूक्ष्म-से-सूक्ष्म रखते हैं), वे अणु-से-अणु, लघु छोटे, गुरु बड़े, स्थूल-रूपवाले स्थावर तथा जंगम, स्थिर और चर-स्वरूपवाले—सभी ओत-प्रोत हैं, पिरोए हुये हैं। जैसे सूत में मनके पिरोए हुये हों। वह सबसे बड़ा तत्व अम्बर—आकाश—महाकाश-तत्त्व है। इस महाकाश-तत्त्व में ही यह सब कुछ प्रपंच ब्रह्माण्ड अनेकानेक व्याप्त हो रहे हैं। यह भावार्थ हुआ। उस महा-महान् अम्बर-तत्त्व को महा-प्रलय-समय में पी-पीकर केवल एकमात्र आप स्व-प्रकाश से शेष रहती हैं। स्वयं केवल एक आप ही प्रकाशमान रहती हैं। उस पीताम्बरा—'पीतम् अम्बरं यया सा'—पी लिया है महाकाश तत्व जिसने, ऐसी महा-महा मूलमाया-स्वरूपा भगवती बगला ! आपके गुणगान करने में हम कौन समर्थ हो सकते हैं ! इसमें यह अर्थ विशेष ध्यान देने योग्य है—'पीतं अम्बरं यया सा'। शेष अर्थ 'पीले वस्त्रवाली', ऐसा तो सभी जानते हैं।

अब मूल-मन्त्र के आदि वर्ण प्रणव का स्वरूप बताते हुये अपनी शुभाकांक्षा प्रकट करते हैं—

आद्यैस्त्रेधाक्षरैर्यद् विधि - हरि - गिरिशींस्त्रीन् सुरान् वा गुणांश्च ।
मात्रास्तिस्रोऽप्यवस्थाः सततमभिदधत् त्रीन् स्वरान् त्रींश्च लोकान् ।
वेदाद्यं त्र्यर्णमेकं विकृति-विरहितं बीजमों त्वां प्रधानं ।
मूलं विश्वस्य तुर्य्यं ध्वनिभिरविरतं वक्ति तन्मे श्रियो स्यात् ॥ २ ॥

हे मातः पीताम्बरे भगवती ! अकार आदि तीन वर्णों से प्रणव के विश्लेषण में—अ + उ + म् ऐसे तीन अक्षर हैं । इन तीनों अक्षरों में ब्रह्मा-विष्णु-महेश इन तीन देवों को और तीन (सत्व, रजः, तमः) गुणों को एवं तीन मात्राओं—एक-द्वि-त्रिमात्राओं को तथा उदात्त, अनुदात्त, स्वरित इन स्वरों को तथा तीन अवस्थाओं (जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति) को और तीन लोकों (भूः, भुवः, स्वः) को निरन्तर बतलाया हुआ यह वेद का आद्य वर्ण ओंकार (प्रणव) तीन अक्षरवाला विकृति रहित निर्विकार आपका बीज है । यह आपको अपनी तीन वर्ण-ध्वनियों से उक्त सभी तीन-तीन देवों, गुणों, अवस्थाओं, मात्राओं, स्वरों और लोकों में सर्व-प्रधानतत्व विश्व का मूल तुरीय तत्त्व निरन्तर बतलाता है । वह मुझे श्री प्रदान करनेवाला हो ।

अब 'स्थिरमाया प्रणव'—बगला के स्वरूपनिर्देशक बीज का विवेचन करते हुये उसकी महिमा बतलाते हैं—

सान्ते रान्तेन वामाक्षणि विधु-कलया राजिते त्वं महेशि !
बीजान्तःस्था लतेव प्रविलससि सदा सा हि माया स्थिरेयम् ।
जप्ता ध्यातापि भक्तैरहनि निशि हरिद्राक्त-वस्त्रावृतेन ।
शत्रून् स्तभ्नाति कान्तां वशयति विपदो हन्ति वित्तं ददाति ॥ ३ ॥

हे महेशि ! भगवति बगले ! 'वामाक्षणि' बाएँ नेत्र में अर्थात् ईकार में, 'विधु-कलया' (रान्तेन राजिते सान्ते) 'रान्ते' लकार से और 'विधु-कलया' चन्द्र-विन्दु अनुस्वार विन्दु से विराजित, 'सान्त' हकार में अर्थात् ईकार में लकार मिले हुये और अनुस्वार-युक्त हकार से 'ह्लीं' बनता है । इसे 'स्थिर-माया' कहते हैं । यही बगला का मुख्य बीज है । इसमें हे महेशि ! आप बीज में लता की तरह सदा विलास करती हो । वही 'स्थिर-माया' आपका एकाक्षर मुख्य मन्त्र है । यह ध्यान और जप करने से भक्तों, साधकों को, जो दिन में रात में हरिद्रा (हलदी) से रंगे वस्त्र पहने हुये हलदी की माला से, पीतासन पर बैठे इसे ध्याते जपते हैं या जपते आपका ध्यान करते रहते हैं तो यही स्थिर-माया महा-मन्त्र उन साधकों के शत्रुओं को स्तम्भित करता है, मनोहर कामिनियों को वश करता है, विपत्तियों को दूर करता है और मनमाना धन प्रदान करता है । अर्थात् सभी वांछित प्रदान करता है ।

ऊपर कहे गये मन्त्र का जप-विधान और सर्वाभीष्ट-प्रदत्व बतलाते हैं—

मौनस्थः पीत - पीताम्बर - वलित - वपुः केसरीयासवेन ।
कृत्वान्तस्तत्त्व-शोधं कलित-शुचि-सुधा-तर्पणोऽर्चां त्वदीयाम् ।
कुर्वन् पीतासनस्थः कर-धृत-रजनी-ग्रन्थि-मालोऽन्तराले ।
ध्यायेत् त्वां पीत-वर्णां पटु-युवति-युतो ह्रीप्सितं किं न विन्देत् ॥ ४ ॥

हे पीताम्बरे भगवति ! आपका साधक मौन धारे हुये, यहाँ 'मौन' से अन्यान्य बातचीत करने, किसी दूसरे से बोलने का निषेध समझना चाहिये, स्वयं साधक तो ध्यान-मन्त्रादि उच्चारण करें ही, ऐसा संकेत है। पीले आसन पर बैठ, पीले वस्त्र पहन, अपनीचतुर शक्ति के साथ केसर के आसव से तत्व-शोधन कर अन्तर्याग में ध्यान-पूजा कर उसी शोधित केसर के आसव से भगवती को तर्पण अर्पण कर (पुनः आवरण-सहित पूजा पूर्ण कर) हरिद्रा-ग्रन्थि की माला हाथ में ले उससे जप करता है (सशक्ति ही जप करता है) और आप पीत-वर्णा का ध्यान करता है, तो निश्चय ही वह कौन सा मनोरथ है, जो उसे प्राप्त न हो। अर्थात् वह समर्थ साधक सभी अभीष्ट पा सकता है। यह प्रयोग भी अनुभूत ही है।

५ वें पद्य से मन्त्र-जप के साथ करने योग्य ध्यान बतलाते हैं—

वन्दे स्वर्णाभ-वर्णां मणि-गण-विलसद्धेम-सिंहासनस्थाम्।
पीतं वासो वसानां वसु-पद-मुकुटोत्तंस-हाराङ्गदाढ्याम्।
पाणिभ्यां वैरि-जिह्वामध उपरि-गदां बिभ्रतीं तत्पराभ्यां।
हस्ताभ्यां पाशमुच्चैरध उदित-वरां वेद-बाहुं भवानीम्॥ ५॥

सुवर्ण-से वर्ण (कान्ति, रूप) वाली, मणि-जटित सुवर्ण के सिंहासन पर विराजमान और पीले वस्त्र पहने हुई (पीले ही गन्ध-माल्य-सहित) एवं 'वसु-पद'—अष्ट-पद—अष्टापद सुवर्ण के मुकुट, कुण्डल हार, बाहु-बन्धादि भूषण पहने हुई एवं अपनी दाहिनी दो भुजाओं में नीचे वैरि-जिह्वा और ऊपर गदा धारण करती हुई; ऐसे ही बाएँ दोनों हाथों में ऊपर पाश और नीचे वर धारण करती हुई, चतुर्भुजा भवानी भगवती को 'वन्दे' प्रणाम करता हूँ।

अब षट्-त्रिंशदक्षरी विद्या की महिमा बतलाते हैं—

षट्-त्रिंशद्-वर्ण-मूर्तिः प्रणव-मुख-हरांघ्रि-द्वयस्तावकीन—
श्चम्पा-पुष्प-प्रियाया मनुरभि-मतदः कल्प-वृक्षोपमोऽयं।
ब्रह्मास्त्रं चानिवार्य्यं भुजग-वर-गदा-वैरि-जिह्वा-ग्रहस्ते !
यस्ते काले प्रशस्ते जपति स कुरुतेऽप्यष्ट-सिद्धीः स्व-हस्ते॥ ६॥

पाश, वर, गदा और वैरि-जिह्वा हाथ में धारण करनेवाली ! आपका प्रणव-मुखवाला, ॐकार जिसका मुख है—आदि है। और 'हरांघ्रि-द्वय'—ठ-द्वय–'स्वाहा' अन्त में पद है, ऐसी छत्तीस वर्णों की मूर्ति वाला; चम्पा के पुष्पों को अधिक प्रिय समझनेवाली आपका यह महा-मन्त्र कल्प-वृक्ष के समान सर्वाभीष्ट फल देनेवाला है। यही अनिवार्य, जिसका कोई प्रतीकार नहीं है ऐसा, ब्रह्मास्त्र है। जो साधक इसे 'प्रशस्त, काल में—चन्द्र-तारादि अनुकूल समय में जपता है (आपकी सविधान अर्चना के साथ), वह आठों सिद्धियों को अपने हस्त-गत कर लेता है।

७ वें पद्य से तीसरा मन्त्र, जो पञ्च-रत्नों में तीसरा है (दो मन्त्र ऊपर कह चुके हैं), निर्देश करते हैं—

मायाद्या च द्वि-ठान्ता भगवति ! बगलाख्या चतुर्थी-निरूढा।
विद्यैवास्ते य एनां जपति विधि-युतस्तत्व-शोधं निशीथे।
दाराढ्यः पञ्चमैस्त्वां यजति स हि दृशा यं यमोक्षेत तं तं।
स्वायत्त-प्राण-बुद्धीन्द्रिय-मय-पतितं पादयोः पश्यति द्राक्॥ ७॥

हे भगवति ! 'मायाद्या'—माया 'ह्लीं' आदि में है जिसके, ऐसी और 'चतुर्थी-निरूढा'—चतुर्थी विभक्ति में बैठी हुई 'बगला' यह 'आख्या' नाम अर्थात् 'वगलायै'; द्वि-ठान्ता—द्वि-ठः 'स्वाहा' है अन्त में जिसके अर्थात् 'ह्लीं वगलायै स्वाहा' यों सप्तार्ण मन्त्र हुआ। यह भी विद्या ही है। स्वाहान्त मन्त्र 'विद्या' कहलाते हैं, इस नियम से विद्या है। और विद्याओं के मन्त्र भी निरूप्य-निरूपक और वाच्य-वाचक-सम्बन्ध से 'विद्या' ही कहलाते हैं। जो मानव आगम-विधान—कुल और आम्नायोक्त पद्धति से अर्ध-रात्रि में तत्व-शोधन आदि पूर्णकर 'दाराढ्यः' दारा—शक्ति, उसके साथ, पाँच मकारों से आपकी पूजा करता है और इस विद्या का जप करता है, वह साधकेन्द्र अपनी दृष्टि से जिस-जिसको देखता है, शीघ्र ही उस-उसको मन-प्राण-बुद्धि-इन्द्रियों-समेत स्व-वश हुये और अपने चरणों में पड़े हुये देखता है।

८ वें पद्य में पञ्च-रत्नों के चौथे मन्त्र-रत्न का निरूपण करते हैं—

माया - प्रद्युम्न-योनिव्यनुगत-बगलाऽग्रे च मुख्यै गदा-धारिण्यै ।
स्वाहेति तत्त्वेन्द्रिय - निचय - मयो मन्त्र - राजश्चतुर्थः ।
पीताचारो य एनं जपति कुल-दिशा शक्ति - युक्तो निशायां ।
स प्राज्ञोऽभीप्सितार्थाननुभवति सुखं सर्व - तन्त्र - स्वतन्त्रः ॥ ८ ॥

हे मातः ! माया 'ह्लीं' (यहाँ स्थिर-माया भी स्वीकार्य है प्रसङ्गोपात्त होने के कारण), प्रद्युम्न 'क्लीं' और योनि 'ऐं' इनके अनुगत 'बगला' उसके आगे 'मुख्यै' और 'गदा-धारिण्यै स्वाहा' इस प्रकार यह तत्व (५) और इन्द्रिय (१०) मिलकर पन्द्रह वर्ण का मन्त्र हुआ। इसे 'बगला पञ्च-दशी मन्त्र-रत्न' कहते हैं। यह चौथा मन्त्र-राज है। जो साधक-श्रेष्ठ इस मन्त्र को कुल-क्रम से—निशा में शक्ति-समन्वित हुआ जपता है (अर्चन-तर्पण-सहित), वह बुद्धिमान् विद्वान् सर्व-तन्त्र-स्वतन्त्र होता है और अपने सभी अभीष्ट अर्थों का सुखपूर्वक अनुभव करता है।

अब पाँचवां मन्त्र-रत्न बगला विद्या का 'मन्दार' मन्त्र बतलाते हैं—

श्री - माया - योनि - पूर्वा भगवति बगले मे श्रियं देहि देहि,
स्वाहेत्थं पञ्चमोऽयं प्रणव सह - कृतो भक्त - मन्दार - मन्त्रः ।
सौवर्ण्या मालयाऽमुं कनक - विरचिते यन्त्रके पीत - विद्यां,
ध्यायन् पीताम्बरे ! त्वां जपति य इह स श्री-समालिङ्गितः स्यात् ॥ ९ ॥

श्री—'श्रीं' वीज और माया—'ह्लीं' वीज तथा योनि—'ऐं' वीज पूर्व बोलकर 'भगवति बगले मे श्रियं देहि देहि स्वाहा' इस प्रकार 'प्रणव' ओंकार सहित किया हुआ यह पाँचवाँ 'भक्त-मन्दार' नाम का बगला विद्या का मन्त्र-रत्न है। इस मन्त्र को सुवर्ण की माला से सुवर्ण यन्त्र पर हे पीताम्बरे ! आप भगवती को पूजता ध्याता हुआ जो मनुष्य जपता है, वह इस संसार में श्री (लक्ष्मी) से समालिङ्गित रहता है। अर्थात् उसके पास धन—धान्य—सम्पदा प्रायः रहती ही है। वह दरिद्र नहीं होता है, यह भावार्थ हुआ। पीताम्बरा पञ्चदशी भी यही है, प्रणव सहित षोडशी भी यही है।

अब पांचों मन्त्र-रत्नों की महिमा बतलाते हुये 'बगला-दशक' स्तोत्र पूर्ण करते हैं—

एवं पञ्चापि मन्त्रा अभिमत-फलदा विश्व-मातुः प्रसिद्धाः,
देव्याः पीताम्बरायाः प्रणत-जन-कृते काम-कल्प-द्रुमन्ति ।

एतान् संसेवमाना जगति सुमनसः प्राप्त-कामाः कवीन्द्राः ।
धन्या मान्या वदान्या सुविदित-यशसो देशिकेन्द्रा भवन्ति ॥ १० ॥

इस प्रकार ये पाँचों मन्त्र विश्व-माता देवी भगवती पीताम्बरा के प्रसिद्ध हैं और ये प्रणत (भक्त साधक) जनों के लिये काम-कल्पद्रुम हैं। इन्हें साधते हुये विद्वान् साधक भक्त लोग पूर्ण मनोरथ पाते और कविराज बनते एवं धन्य सम्माननीय तथा उदार मनवाले प्रख्यात यशस्वी और देशिकेन्द्र अर्थात् गुरुवर मण्डलाधीश बनते हैं। (अन्त में इस 'वगला-दशक' की फल-श्रुति प्रस्तुत करते हैं)—

करस्थ चषकस्यात्र संभोज्य झषकस्य च । बगला - दशकाध्येतुर्मातङ्गो मशकायते ॥

हाथ में सुधा-पूर्ण पात्र हो (तत्व-शोधन करता और रहस्य-याग में होम करता हो तथा तर्पण-निरत हो), आगे उस साधक के भोज्य पदार्थों में का प्रशस्त झषक शोधित संस्कारित हो। फिर बगला भगवती का दशक वह पढ़ता हो, ऐसे साधकेन्द्र के लिये या उक्त साधक के आगे मातङ्ग हाथी भी मशक समान हो जाता है। वह साधक हाथी को भी, अपने विपरीत हो तो, मच्छर समझता है।

श्रीबगला—प्राकट्य

श्री सूर्यप्रकाश गोस्वामी

शिव के सम्मुख पार्वती धर कर बोलीं माथ ।
वगला की उत्पत्ति की कथा सुनाओ नाथ ॥ दोहा ॥

शिव उवाच

कृत युग के पहिले भूतल पर वात क्षोभ हिन्दोल उठा ।
ध्रुव तारा हिल गया अचानक जड़ चेतन भू डोल उठा ॥
प्रकृति पुरातन की शाखा के नखत नीड़ सम टूट गए ।
सूरज चन्दा की किस्मत को तमचर आकर लूट गए ॥

प्रलय काल का दृश्य चतुर्दिक दीख पड़ा जगतीतल में ।
डूब गये हिमगिरि सम पर्वत महासागरों के जल में ॥
महाकाश के महाउदर में तत्व सभी लय होते थे ।
इन्द्रादिक सुर काँप काँप कर भयविह्वल हो रोते थे ॥

करुणा से भर गए विष्णु भी चिन्तन में लवलीन हुये ।
तप करते वर्षों तक नारायण अति क्षीण हुये ॥
सौराष्ट्र देश में निकट सरोवर त्रिपुरसुन्दरी प्रकट हुईं ।
मातृशक्ति को देख विष्णु की आँखें श्रद्धा विनत हुईं ॥

'मा भैः' कहकर त्रिपुरा ने बगला का तब अवतार लिया ।
करुणा पूरित नयना ने जड़ चेतन का उद्धार किया ॥
पीताम्बर-धारिणी माया की यह विख्यात कहानी है ।
स्तम्भन-शक्ति-स्वरूपा बगला माता स्वयं भवानी है ॥

मङ्गलवार चतुर्दशी वीर रात्रि विख्यात ।
कुल नक्षत्र मकार में प्रकटीं बगला मात ॥ दोहा ॥

वेद-सम्मत

श्री बगलोपासना

आचार्य पं० लक्ष्मणदत्त जी शास्त्री चतुर्वेद

मानव समाज की ऐहिक एवं पारलौकिक समुन्नति के लिये वेद ही मुख्य साधन हैं। जैसा कि कहा भी है कि धर्म जानने की इच्छा रखनेवालों के लिये वेद ही परम प्रमाण है। और बीते हुये काल में वेदों के आदेश पर चलकर ही मानव जाति का उत्थान सम्भव हुआ। वर्तमान काल में भी वेदों पर चलने से ही मानव जीवन सफल हो सकता है। और आनेवाले समय में भी वेदों की अवहेलना करके मनुष्य सुखी न रह सकेंगे। मनु का कथन सर्वथा मान्य है। सामवेद के ब्राह्मण में कहा है कि मनु ने जो कहा है, वह औषधों का औषध है।

वह वेद ज्ञान-कर्म-उपासना रूप तीन काण्डों में उपनिबद्ध है। वर्तमान कलि-काल में वैदिक पाठ्य प्रणाली स्मृति-विपरीत होने से काम्य-फल में अभिप्रेत-सिद्धि न होना स्वाभाविक है। अतएव परम कारुणिक सब विद्याओं के अधिष्ठाता एवं सब जीवमात्र के अधिपति शिवजी ने निज कर्म-पाश में बँधे हुये तथा संसार-सागर पार करने में असमर्थ प्राणियों के उद्धार के लिये जो साधन जगदम्बा श्री पार्वती से कहे हैं, वे 'आगम' शब्द द्वारा अभिव्यक्त हैं। जैसी कि निरुक्ति ऋषियों ने की है कि शिव जी के मुख-कमल द्वारा जो श्रीपार्वती जी के कानों में आया, उसे आगम कहते हैं। यह उपासना-काण्ड में परिणत हुआ। महानिर्वाण तन्त्र में आगम-प्रशंसा स्वयं शिव जी द्वारा की गई है कि आगम-प्रोक्त विधि से कलि-काल में बुद्धिमान् मनुष्य देवताओं का यजन करे। कलियुग में आगम को छोड़कर जो अन्य मार्ग में प्रवृत्त होता है, उसकी गति नहीं होती, यह सत्य है।

इन्हीं आगम तन्त्रग्रन्थों में सब देवताओं की उपासना दी गई है। उनमें भी दश महा-विद्याओं की उपासना को प्राथमिकता दी गई है। इन्हीं महा-विद्याओं के अन्तर्गत श्रीपीताम्बरा बगला जी हैं, जिनका कि वर्णन पुराणों में भी आता है। जिस समय दैत्यों ने देवासुर-संग्राम में विष्णु भगवान् को समुद्र में गिरा दिया और वे निश्चेष्ट हो गये, तब महा-शक्ति ने श्रीबगला जी का रूप धारण करके भगवान् को समुद्र से बाहर निकाल कर बाहर फेंक दिया और उनको सचेष्ट करके वैकुण्ठ धाम भेज दिया।

श्रीपीताम्बरा जैसे राज-कार्य सिद्ध कराने में अपना प्रभुत्व रखती हैं, वैसे ही साधकों की शरीर-रक्षा करती हुई अभीष्ट-दात्री भी हैं। 'शैवागम-सार' में शिव-नारद-सम्वाद रूप 'श्री बगला पञ्जर-स्तोत्र' अन्वर्थ —नाम जैसा कार्य करने में सिद्ध है। इस स्तोत्र के सहस्र (एक हजार) पाठ सिद्धि-प्राप्ति के लिये पहिले करने चाहिये। फिर सौ पाठ अनुष्ठान कार्य-सिद्धि के लिये करने चाहिये। इस स्तोत्र के चमत्कार लेखक को भी हुये हैं और हमारे स्व० श्री बाबा महाराज दो सौ मनुष्यों के बीच से इसी के प्रभाव से निकल गये और किसी को दृष्टिगोचर न हुये तथा मुकदमे में विजय प्राप्त हुई।

सूचना—उक्त 'पञ्जर-स्तोत्र' इस विशेषाङ्क के आगे के पृष्ठों में 'श्रीबगला-स्तोत्र-संग्रह' के अन्तर्गत प्रकाशित किया गया है।—सं०

श्रीबगला मन्त्र की साधना

'कुलभूषण' पण्डित रमादत्त शुक्ल, एम० ए०

तन्त्रोक्त साधना-पद्धति में 'क्रम-दीक्षा' का अपना विशेष महत्व है। 'क्रम-दीक्षा' के अनुसार साधना करने से मन्त्र-साधना का श्रेष्ठ फल—भुक्ति और मुक्ति दोनों ही साधक को सुलभ होती हैं। इस सम्बन्ध में प्रातःस्मरणीय 'राष्ट्रगुरु' अनन्तश्री स्वामी जी महाराज द्वारा संग्रहीत प्रामाणिक ग्रन्थ 'श्री बगलामुखी रहस्यं' के पृष्ठ ११३ पर उल्लिखित वचनों के अनुसार भगवती श्री बगला की 'क्रम-दीक्षा' की सामान्य परम्परानुसार निम्न क्रम से मन्त्र प्राप्त कर क्रमशः उनका पुरश्चरण करना चाहिये—

एकाक्षर, चतुरक्षर, अष्टाक्षर, ३६ अक्षर, गणेश, वटुक, मृत्युञ्जय, दक्षिणा काली, सौभाग्य-विद्या, हृदय, शताक्षर, पञ्चास्त्र, कुल्लुका और ब्रह्मास्त्र-गायत्री।

इस प्रकार क्रमशः मन्त्र-साधना कर गुरु से 'अभिषेक' कराये।

आम्नायों के अनुसार साधना करनेवालों के लिये विशेष क्रम निर्दिष्ट है। ऊर्ध्वाम्नाय में भगवती बगला का महा-त्रिपुरसुन्दरी से ऐक्य-भाव चिन्तन करते हुये तदनुरूप मन्त्र जप ध्यानादि करना विहित है। उदाहरण के लिये श्री षोडशी के तीन कूटों के पूर्व 'ऐं ह्लीं श्रीं सौः क्लीं ऐं ह्लीं श्रीं' जोड़कर अन्त में 'ह्लीं ऐं क्लीं सौः श्रीं' बीज की योजना कर परा-षोडशी मन्त्र का जप किया जाता है। श्री षोडशी के ध्यान में भी पीत-वर्ण की प्रधानता हो जाती है। यथा—

ध्यायेत् पद्मासनस्थां विकसित - वदनां पद्म - पत्रायताक्षीम्।
हेमाभां पीत-वस्त्रां कर - कलित - लसद् - हेम - पद्मां वराङ्गीम्॥
सर्वालङ्कार - युक्तां सततमभयदां भक्त - नम्रां भवानीम्।
श्रीविद्यां शान्त - मूर्ति सकल - सुर - नुतां सर्व - सम्पत् - प्रदाम्॥

इस प्रकार श्रीविद्या को पीले वस्त्रों, आभूषणों, पुष्प-मालाओं से अलंकृत पीत-वर्णा-रूप में ध्यान करते हैं। साथ ही उन्हें दो भुजावाली श्रीबगला-सुन्दरी के रूप में भावना करनी होती है। यही नहीं, जैसे श्री षोडशी पञ्च-प्रेतों पर आसीना हैं, वैसे ही श्रीबगला-सुन्दरी को भी पञ्च-प्रेतासना ही हृदयङ्गम करते हैं।

'क्रम-दीक्षा' के इस विधान के पालन करनेवाले साधक को ही पूर्णाभिषेक की प्राप्ति होती है।

अन्य आम्नायों में मन्त्रोपदेश का क्रम निम्न प्रकार निर्दिष्ट किया गया है—

पूर्वाम्नाय में—ब्रह्मास्त्र-गायत्री, हृदय, नवाक्षर, एकादशाक्षर, शेष श्री षोडशी के समान।

दक्षिणाम्नाय में—३६ अक्षर, एकाक्षर, चतुरक्षर, अष्टाक्षर, शेष पूर्ववत्।

पश्चिमाम्नाय में—त्र्यक्षर, शताक्षर, माला-मन्त्र, शावर-मन्त्र, पर-प्रयोग-भक्षिणी, शेष पूर्ववत्।

उत्तराम्नाय में—पञ्चास्त्र, बगलास्त्र, कवच-विद्या, शेष पूर्ववत्।

भगवती बगला की 'ब्रह्मास्त्र-गायत्री' मन्त्रोद्धार (श्रीबगला-मुखी रहस्यं, पृष्ठ ५४) के अनुसार निम्न प्रकार है—

ब्रह्मास्त्राय विद्महे स्तम्भनं तन्नः बगला प्रचोदयात् ।

ऊर्ध्वाम्नाय में श्री बगला गायत्री का रूप इस प्रकार है—

ऐं ह्लीं श्रीं क्लीं स-४- ह-६ क-५, परा-षोडशी हंसः सोहं ह्लौं ह्लौं ।

दिव्यौघ, मानवौघ गुरु षोडशी के ही समान हैं । सिद्धौघ में भिन्नता मिलती है, जिनके नाम 'श्री बगलामुखी रहस्यं' के पृष्ठ ४०५ पर द्रष्टव्य हैं ।

'क्रम-दीक्षा' का उक्त क्रम तीन वर्षों में पूरा कर लेना चाहिये । इस सब विवरण से स्पष्ट है कि श्रीबगला-मन्त्र की साधना में कितने ही मन्त्रों का अभ्यास करना अपेक्षित है । ये मन्त्र सांकेतिक रूप में 'सांख्यायन तन्त्र' एवं 'श्रीबगलामुखी रहस्यं' जैसे संस्कृत ग्रन्थों में यत्र-तत्र संग्रहीत हैं । यहाँ उक्त मन्त्रों का उद्धार कर पहले पहल एक साथ प्रकाशित किया जा रहा है । जिन मन्त्रों के विनियोगादि उपलब्ध हैं, उन्हें भी उद्धृत कर दिया गया है । एक और भी बात ध्यान में रखने की है । भगवती बगला का मूल-बीज स्थिर-माया, स्तब्ध-माया, बगला-बीज आदि नामों से प्रसिद्ध है । 'स्थिर-माया' उद्धार के अनुसार गगनार्ण=ह, स्थिर-बीज=ल, रति-बिन्दु=ीं अर्थात् 'ह्लीं' है किन्तु यह शापित है, 'रेफ'='र्' का संयोग करने से शाप दूर होता है । इस प्रकार 'ह्ल्रीं' बीज की प्राप्ति होती है (बगलामुखी रहस्यं, पृष्ठ ५०-५१) । यही श्रीबगलामुखी का एकाक्षर मन्त्र है (ब० र०, पृ० ४७) । यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 'ह्लीं' बीज के शापित होने का कोई प्रसङ्ग ज्ञात नहीं है । अनुभवी साधकों का मानना है कि इस बीज में अग्नि-बीज 'र्' को जोड़ देने से इसमें उग्रता आ जाती है, जिससे काम्य प्रयोग शीघ्र फलीभूत होते हैं । जो भी हो, 'ह्लीं' और 'ह्ल्रीं' दोनों का प्रचलन साधकों में है । अतः आगे दिये मन्त्रों में जहाँ-जहाँ 'ह्लीं' है, वहाँ-वहाँ 'ह्ल्रीं' का पाठान्तर भी यत्र-तत्र दिखाई देता है । साधकों को अपनी गुरु-परम्परा के अनुसार ही मन्त्र-रूप का अभ्यास करना उचित है ।

श्रीबगला-मूलमन्त्र-संग्रह

१. एकाक्षरी (१ अक्षर का) मन्त्र—'ह्लीं'

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबगलामुखी-एकाक्षरी-महामन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्री बगलामुखी देवता, लँ बीजं, ह्रीं शक्तिः, ईं कीलकं, श्रीबगलामुखी-देवताम्बा-प्रीतये जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास— श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, श्रीबगलामुखी-देवतायै नमः हृदि, लँ बीजाय नमः गुह्ये, ह्रीं शक्तये नमः पादयोः, ईं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीबगलामुखी-देवताम्बा-प्रीतये जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास—		कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
	ॐ ह्लां	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
	ॐ ह्लीं	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
	ॐ ह्लूं	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
	ॐ ह्लैं	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं
	ॐ ह्लौं	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
	ॐ ह्लः	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

ध्यान—वादी मूकति, रङ्कति क्षिति - पतिर्वैश्वानरः शीतति,
क्रोधी शान्तति, दुर्जनः सुजनति, क्षिप्रानुगः खञ्जति ।
गर्वी खर्वति, सर्व - विच्च जड़ति त्वद् - यन्त्रणा यन्त्रितः,
श्रो-नित्ये बगलामुखि ! प्रति - दिनं कल्याणि ! तुभ्यं नमः ॥

२. त्र्यक्षर (३ अक्षरोंवाला) मन्त्र—'ॐ ह्लीं ॐ'

३. तुर्याक्षर, चतुरक्षर (४ अक्षरोंवाला) मन्त्र—'ॐ आं ह्लीं क्रों'

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबगला-चतुरक्षरी-मन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीबगलामुखी देवता, ह्लीं बीजं, आँ शक्तिः, क्रों कीलकं, श्रीबगलामुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, श्रीबगलामुखी-देवतायै नमः हृदये, ह्लीं बीजाय नमः गुह्ये, आं शक्तये नमः पादयोः, क्रों कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीबगलामुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

ध्यान—कुटिलालक-संयुक्तां मदाघूर्णित-लोचनां । मदिरामोद-वदनां प्रवाल-सदृशाधराम् ॥
सुवर्ण-शैल-सुप्रख्य-कठिन-स्तन-मण्डलां । दक्षिणावर्त्त-सन्नाभि-सूक्ष्म-मध्यम-संयुताम् ॥

४. पञ्चाक्षर (५ अक्षरों का) मन्त्र—'ॐ ह्लीं स्त्रीं हुं फट्'

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबगला-पञ्चाक्षर-मन्त्रस्य श्रीअक्षोभ्य ऋषिः, वृहती छन्दः, श्रीबगलामुखी-चिन्मयी-देवी देवता, हूँ बीजं, फट् शक्तिः, ह्लीं स्त्रीं कीलकं, श्रीबगलामुखी-चिन्मयी-देवी-देवता-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीअक्षोभ्य-ऋषये नमः शिरसि, वृहती-छन्दसे नमः मुखे, श्रीबगलामुखी-चिन्मयी-देवी-देवतायै नमः हृदि, हूँ बीजाय नमः गुह्ये, फट् शक्तये नमः पादयोः, ह्लीं स्त्रीं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीबगलामुखी-चिन्मयी-देवी-देवता-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास—	कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
ह्लां बगलायै नमः	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ह्लीं बगलायै नमः	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
ह्लूं बगलायै नमः	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ह्लैं बगलायै नमः	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं
ह्लौं बगलायै नमः	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
ह्लः बगलायै नमः	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

ध्यान—प्रत्यालीढ़-परां घोरां मुण्डमाला-विभूषितां, खर्वां लम्बोदरीं भीमां पीताम्बर-परिच्छदां।
नव-यौवन-सम्पन्नां पञ्च-मुद्रा-विभूषितां, चतुर्भुजां ललज्जिह्वां महा-भीमां वर-प्रदाम् ।
खड्ग-कर्त्री-समायुक्तां सव्येतर-भुज-द्वयां, कपालोत्पल-संयुक्तां सव्य-पाणि-युगान्विताम् ।
पिङ्गोग्रैक-सुखासीनां मौलावक्षोभ्य-भूषितां, प्रज्वलत्-पितृ-भू-मध्य-गतां दंष्ट्रा-करालिनीं ।
तां खेचरां स्मेर-वदनां भस्मालङ्कार-भूषितां, विश्व-व्यापक-तोयान्ते पीत-पद्मोपरिस्थितां ॥

५. अष्टाक्षर (८ अक्षरों का मन्त्र)—'ॐ आं ह्लीं क्रों हुं फट् स्वाहा'

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबगलाष्टाक्षरात्मक-मन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, ॐ बीजं, ह्लीं शक्तिः, क्रों कीलकं, श्रीबगलाम्बा-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, ॐ बीजाय नमः गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, क्रों कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीबगला-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

षडङ्ग-न्यास—एकाक्षर मन्त्र (पृष्ठ ४२) के समान।

ध्यान—युवतीं च मदोन्मत्तां पीताम्बर-धरां शिवां, पीत-भूषण-भूषाङ्गीं सम-पीन-पयोधरां।
मदिरामोद-वनां प्रवाल-सदृशाधरां, पान-पात्रं च शुद्धिं च बिभ्रतीं बगलां स्मरेत्॥

६. नवाक्षर (९ अक्षरों का) मन्त्र—ह्लीं क्लीं ह्रीं बगलामुखि ठः।

७. एकादशाक्षर (११ अक्षरों का) मन्त्र—ॐ ह्लीं क्लीं ह्रीं बगलामुखि स्वाहा।

८. षट्-त्रिंशदक्षर (३६ अक्षरों का) मन्त्र—ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्व-दुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबगलामुखी-षट्-त्रिंशदक्षरी-विद्या-महा-मन्त्रस्य श्री नारद ऋषिः, बृहती छन्दः, श्रीबगलामुखी देवता, लँ बीजं, हँ शक्तिः, ईं कीलकं, श्रीबगलामुखी-देवता-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीनारद-ऋषये नमः शिरसि, बृहती-छन्दसे नमः मुखे, श्रीबगलामुखी-देवतायै नमः हृदये, लँ बीजाय नमः गुह्ये, हँ शक्तये नमः पादयोः, ईं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीबगलामुखी-देवता-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

षडङ्ग-न्यास—	कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
ॐ ह्लीं	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ॐ ह्लीं बगलामुखि	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
,, सर्व-दुष्टानां	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
,, वाचं मुखं पदं स्तम्भय	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं
,, जिह्वां कीलय	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
,, बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

ध्यान—चतुर्भुजां त्रि-नयनां कमलासन-संस्थितां, त्रिशूलं पान-पात्रं च गदां जिह्वां च बिभ्रतीं॥
बिम्बोष्ठीं कम्बु-कण्ठीं च सम-पीन-पयोधरां, पीताम्बरां मदाघूर्णां ध्याये ब्रह्मास्त्र-देवतां॥

९. अशीत्यक्षरात्मक (८० अक्षरों का) श्रीबगला-हृदय मन्त्र—आं ह्लीं क्रों ग्लौं हुं ऐं क्लीं श्रीं ह्रीं बगलामुखि आवेशय आवेशय आं ह्लीं क्रों ब्रह्मास्त्र-रूपिणि एहि एहि आं ह्लीं क्रों मम हृदये आवाहय आवाहय सान्निध्यं कुरु कुरु आं ह्लीं क्रों ममैव हृदये चिरं तिष्ठ तिष्ठ आं ह्लीं क्रों हुं फट् स्वाहा।

१०. शताक्षरी (१०० अक्षरों का) मन्त्र—ह्लीं ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं ग्लौं ह्लीं बगलामुखि स्फुर स्फुर सर्व-दुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय प्रस्फुर प्रस्फुर विकटाङ्गि घोर-रूपि जिह्वां कीलय महा-भ्रम-करि बुद्धि नाशय विराण्मयि सर्व-प्रज्ञा-मयि प्रज्ञां नाशय उन्मादं कुरु कुरु मनोपहारिणि ह्लीं ग्लौं श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं ह्लीं स्वाहा ।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबगलामुखी-शताक्षरी-महा-मन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, जगत्-स्तम्भन-कारिणी श्रीबगलामुखी देवता, ह्लीं बीजं, ह्रीं शक्तिः, ऐं कीलकं, जगत्-स्तम्भन-कारिणी श्रीबगलामुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीब्रह्मा-ऋषये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, जगत्-स्तम्भन-कारिणी श्रीबगलामुखी-देवतायै नमः हृदि, ह्लीं बीजाय नमः लिङ्गे, ह्रीं शक्तये नमः पादयोः, ऐं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, जगत्-स्तम्भन-कारिणी-श्रीबगलामुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास—एकाक्षर मन्त्र (पृष्ठ ४२) के समान कर एवं अङ्ग-न्यास करे ।

ध्यान—पीताम्बर-धरां सौम्यां पीत-भूषण-भूषितां, स्वर्ण-सिंहासनस्थां च मूले कल्पतरोरधः ।
वैरि-जिह्वा-भेदनार्थं छुरिकां बिभ्रतीं शिवां, पान-पात्रं गदां पाशं धारयन्तीं भजाम्यहम् ।।

११. सप्त-विंशोत्तर-शताक्षर (१२७ अक्षरों का) पर-विद्या-भेदन मन्त्र—ॐ ह्लीं श्रीं ह्रीं ग्लौं ऐं क्लीं हुं क्षीं बगलामुखि पर-प्रयोगं ग्रस ग्रस ॐ-८ ब्रह्मास्त्र-रूपिणि पर-विद्या-ग्रसिनि भक्षय भक्षय ॐ-८ पर-प्रज्ञा-हारिणि प्रज्ञां भ्रंशय भ्रंशय ॐ-८ स्तम्भनास्त्र-रूपिणि बुद्धि नाशय नाशय पञ्चेन्द्रिय-ज्ञानं भक्ष भक्ष ॐ-८ बगलामुखि हुं फट् स्वाहा ।

विनियोग—अस्य श्रीपर-विद्या-भेदिनी-बगलामुखी-मन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, पर-विद्या-भक्षिणी श्रीबगलामुखी देवता, आं बीजं, ह्रीं शक्तिः, क्रों कीलकं, श्रीबगला-देवी-प्रसाद-सिद्धि-द्वारा पर-विद्या-भेदनार्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, पर-विद्या-भक्षिणी-श्रीबगलामुखी-देवतायै नमः हृदि, आं बीजाय नमः गुह्ये, ह्रीं शक्तये नमः पादयोः, क्रों कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीबगला-देवी-प्रसाद-सिद्धि-द्वारा पर-विद्या-भेदनार्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास—		कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
	आं ह्रीं क्रों	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
	वद वद	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
	वाग्वादिनि	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
	स्वाहा	अनामाभ्यां हुं	कवचाय हुं
	ऐं क्लीं सौं	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
	ह्रीं	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

ध्यान—सर्व - मन्त्र - मयीं देवीं सर्वाकर्षण - कारिणीम् ।
सर्व - विद्या - भक्षिणीं च भजेऽहं विधि - पूर्वकम् ।।

१२. बगलास्त्र (४५ अक्षर) मन्त्र—ह्लीं हूं मम शत्रून् ग्लौं ह्लीं बगलामुखि वाचं मुखं ग्रस ग्रस खाहि खाहि भक्ष भक्ष शोणितं पिब पिब बगलामुखि ह्लीं ग्लौं हुं फट् ।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबगलास्त्र-मन्त्रस्य श्रीदुर्वासा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, अस्त्र-रूपिणी श्रीबगलामुखी देवता, ग्लौं बीजं, ह्लीं शक्तिः, फट् कीलकं, अस्त्र-रूपिणी-श्रीबगलाम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीदुर्वासा-ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, अस्त्र-रूपिण्यै श्री-बगलामुखी-देवतायै नमः हृदि, ग्लौं बीजाय नमः गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, फट् कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, अस्त्र-रूपिणी श्रीबगलाम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास—	कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
ॐ ह्लीं	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
बगलामुखि	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
सर्व-दुष्टानां	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
वाचं मुखं पदं स्तम्भय	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं
जिह्वां कीलय	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
बुद्धिं विनाशय ह्लीं	—	—
ॐ स्वाहा	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

ध्यान—चतुर्भुजां त्रि-नयनां पीनोन्नत-पयोधरां । जिह्वां खड्गं पान-पात्रं गदां धारयन्तीं परां ।।
पीताम्बर-धरां देवीं पीत-पुष्पैरलंकृतां । बिम्बोष्ठीं चारु-वदनां मदाघूर्णित-लोचनां ।।
सर्व-विद्याकर्षिणीं च सर्व-प्रज्ञापहारिणीं । भजेऽहं चास्त्र-बगलां सर्वाकर्षण-कर्मसु ।।

१३. श्रीबगला गायत्री (२७ अक्षर) मन्त्र—ॐ ह्लीं ब्रह्मास्त्राय विद्महे स्तम्भन-बाणाय धीमहि तन्नः बगला प्रचोदयात् ।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबगला-गायत्री-मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, ब्रह्मास्त्र-बगला देवता, ॐ बीजं, ह्लीं शक्तिः, विद्महे कीलकं, श्रीब्रह्मास्त्र-बगलाम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, श्रीब्रह्मास्त्र-बगला-देवतायै नमः हृदि, ॐ बीजाय नमः गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, विद्महे कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीब्रह्मास्त्र-बगलाम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास—	कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
ॐ ह्लीं ब्रह्मास्त्राय विद्महे	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
स्तम्भन-बाणाय धीमहि	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
तन्नो बगला प्रचोदयात्	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ॐ ह्लीं ब्रह्मास्त्राय विद्महे	अनामाभ्यां हुं	कवचाय हुं
स्तम्भन-बाणाय धीमहि	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
तन्नो बगला प्रचोदयात्	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

ध्यान—गम्भीरां च मदोन्मत्तां स्वर्ण-कान्ति-सम-प्रभां चतुर्भुजां त्रि-नयनां कमलासन-संस्थितां।
(प्रातः) मुद्गरं दक्षिणे पाशं वामे जिह्वां च बिभ्रतीं पीताम्बर-धरां सौम्यां दृढ़-पीन-पयोधरां।
हेम-कुण्डल-भूषाङ्गीं पीत-चन्द्रार्द्ध-शेखरां, पीत-भूषण-भूषाङ्गीं स्वर्ण-सिंहासने स्थितां ॥
(मध्याह्न) दुष्ट-स्तम्भनमुग्र-विघ्न-शमनं दारिद्रय-विद्रावणं
भूभृत् - स्तम्भन - कारणं मृग-दृशां चेतः समाकर्षणम् ।
सौभाग्यैक-निकेतनं मम दृशोः कारुण्य-पूर्णेक्षणं
विघ्नौघं बगले ! हर प्रति-दिनं कल्याणि ! तुभ्यं नमः ॥
(सायं) मातर्भञ्जय मद्-विपक्ष-वदनं जिह्वाञ्चलां कीलय
ब्राह्मीं मुद्रय मुद्रयाशु धिषणामंघ्रयोर्गतिं स्तम्भय ।
शत्रूंश्चूर्णय चूर्णयाशु गदया गौराङ्गि पीताम्बरे !
विघ्नौघं बगले ! हर प्रति-दिनं कल्याणि ! तुभ्यं नमः ॥

१४ श्रीबगला-माला-मन्त्र (५१४ अक्षर)—ॐ नमो भगवति ! ॐ नमो वीर-प्रताप-विजय-भगवति बगलामुखि ! मम सर्व-निन्दकानां सर्व-दुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय, ब्राह्मीं मुद्रय मुद्रय, बुद्धिं विनाशय विनाशयापर-बुद्धिं कुरु कुर्वात्म-विरोधिनां शत्रूणां शिरो-ललाट-मुख-नेत्र-कर्ण-नासिकोरु-पदाणु-रेणु-दन्तोष्ठ-जिह्वा-तालु-गुह्य-गुद-कटि-जानु-सर्वाङ्गेषु केशादि-पाद-पर्यन्तं पादादि-केश-पर्यन्तं स्तम्भय स्तम्भय, खें खीं मारय मारय, पर-मन्त्र-पर-यन्त्र-पर-तन्त्राणि छेदय छेदयात्म-मन्त्र-यन्त्र-तन्त्राणि रक्ष-रक्ष, ग्रहं निवारय निवारय, व्याधिं विनाशय विनाशय, दुःखं हर हर, दारिद्र्यं निवारय निवारय; सर्व-मन्त्र-स्वरूपिणि ! सर्व-तन्त्र-स्वरूपिणि ! सर्व-शिल्प-प्रयोग-स्वरूपिणि ! सर्व-तत्व-स्वरूपिणि ! दुष्ट-ग्रह-भूत-ग्रहाकाश-ग्रह-पाषाण-ग्रह-सर्व-चाण्डाल-ग्रह-यक्ष-किन्नर-किम्पुरुष-ग्रह-भूत - प्रेत-पिशाचानां शाकिनी-डाकिनी-ग्रहाणां पूर्व-दिशां बन्धय बन्धय; वार्तालि ! मां रक्ष रक्ष, दक्षिण-दिशां बन्धय बन्धय; किरात-वार्तालि ! मां रक्ष रक्ष, पश्चिम-दिशां बन्धय बन्धय; स्वप्न-वार्तालि ! मां रक्ष रक्षोत्तर-दिशां बन्धय बन्धय; कालि ! मां रक्ष रक्षो-र्ध्व-दिशं बन्धय बन्धयोग्र-कालि ! मां रक्ष रक्ष, पाताल-दिशं बन्धय-बन्धय; बगला-परमेश्वरि ! मां रक्ष रक्ष, सकल-रोगान् विनाशय विनाशय, सर्व-शत्रु-पलायनाय पञ्च-योजन-मध्ये राज-जन-स्त्रीं-वशतां कुरु कुरु, शत्रून् दह दह, पच पच, स्तम्भय स्तम्भय, मोहय मोहयाकर्षयाकर्षय, मम शत्रूनुच्चाटयोच्चाटय, हुं फट् स्वाहा ।

१५ ब्रह्मास्त्र-माला-मन्त्र (७७७ अक्षर)—ॐ नमो भगवति चामुण्डे, नर-कङ्क-गृध्रोलूक-परिवार-सहिते, श्मशान-प्रिये, नर-रुधिर-मांस-चरु-भोजन-प्रिये, सिद्ध-विद्याधर-

वृन्द-वन्दित-चरणे, ब्रह्मेश-विष्णु-वरुण-कुबेर-भैरवी-भैरव-प्रिये, इन्द्र-क्रोध-विनिर्गत-शरीरे, द्वादशादित्य-चण्ड-प्रभेऽस्थि-मुण्ड-कपाल-मालाभरणे ! शीघ्रं दक्षिण-दिश्यागच्छागच्छ, मानय मानय, नुद नुद, मम शत्रून् मारय मारय, चूर्णय चूर्णयावेशयावेशय, त्रुट त्रुट, त्रोटय त्रोटय, महा-भूतान् जृम्भय जृम्भय, ब्रह्म-राक्षसानुच्चाटयोच्चाटय, भूत-प्रेत-पिशाचान् मूर्च्छय मूर्छय, मम शत्रूनुच्चाटयोच्चाटय, शत्रून् चूर्णय चूर्णय, सत्यं कथय कथय, वृक्षेभ्यः सन्नाशय सन्नाशयार्कं स्तम्भय स्तम्भय, गरुड़-पक्षपातेन विषं निर्विषं कुरु कुरु, लीलाङ्गालय-वृक्षेभ्यः परिपातय परिपातय, शैल-कानन-महीं मर्दय मर्दय, मुखमुत्पाटयोत्पाटय, पात्रं पूरय पूरय, भूत-भविष्यं यत्-सर्वं कथय कथय, कृन्त कृन्त, दह दह, पच पच, मथ मथ, प्रमथ प्रमथ, घर्घर घर्घर, ग्रासय ग्रासय, विद्रावय विद्रावयोच्चाटयोच्चाटय, विष्णु-चक्रेण वरुण-पाशेनेन्द्र-वज्रेण ज्वरं नाशय नाशय, प्रविदं स्फोटय स्फोटय, सर्व-शत्रून् मम वशं कुरु कुरु, पातालं प्रत्यन्तरिक्षमाकाश-ग्रहमानयानय, करालि ! विकरालि, महा-कालि, रुद्र-शक्ते ! पूर्व-दिशं निरोधय निरोधय, पश्चिम-दिशं स्तम्भय स्तम्भय, दक्षिण-दिशं निधय निधयोत्तर-दिशं बन्धय बन्धय, ह्रां ह्रीं ॐ बन्धय बन्धय; ज्वाला-मालिनि ! स्तम्भिनि, मोहिनि, मुकुट-विचित्र-कुण्डल-नागादि-वासुकी-कृत-हार-भूषणे, मेखला-चन्द्रार्क-हास-प्रभञ्जने, विद्युत्-स्फुरित-सकाश-साट्टहासे ! निलय निलय, हुं फट्, विजृम्भित-शरीरे ! सप्त-द्वीप-कृते, ब्रह्मा-ण्ड-विस्तारित-स्तन-युगलेऽसि-मुसल-परशु-तोमर-क्षुरि-पाश-हलेषु वीरान् शमय शमय, सहस्र-बाहु-परापरादि-शक्ति-विष्णु-शरीरे ! शङ्कर-हृदयेश्वरि, बगलामुखि ! सर्व-दुष्टान् विना-शय विनाशय हुं फट् स्वाहा। ॐ ह्लीं बगलामुखि ! ये केचनापकारिणः सन्ति, तेषां वाचं मुखं स्तम्भय स्तम्भय, जिह्वां कीलय कीलय, बुद्धिं विनाशय विनाशय, ह्लीं ॐ स्वाहा। ॐ ह्लीं ह्लीं हिलि हिलि, शत्रूणां वाचं मुखं पदं स्तम्भय शत्रु-जिह्वां कीलय शत्रूणां दृष्टि-मुष्टि-गति-मति-दन्त-तालु-जिह्वां बन्धय बन्धय, मारय मारय, शोषय शोषय हुं फट् स्वाहा।

१६ श्रीबगला-शावर मन्त्र (८६ अक्षर)—ॐ मलयाचल बगला भगवती महा-क्रूरी महा-कराली राज-मुख-बन्धनं ग्राम-मुख-बन्धनं ग्राम-पुरुष-बन्धनं काल-मुख-बन्धनं चौर-मुख-बन्धनं व्याघ्र-मुख-बन्धनं सर्व-दुष्ट-ग्रह-बन्धनं सर्व-जन-बन्धनं वशीकुरु हुं फट् स्वाहा।

श्रीबगला के पंचास्त्र मन्त्र

प्रथमास्त्र—वडवामुखी (५५ अक्षर) : ॐ ह्लीं हूं ग्लौं बगलामुखि ह्लां ह्लीं ह्लूं सर्व-दुष्टानां ह्लैं ह्लौं ह्लः वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय ह्लः ह्लौं ह्लैं जिह्वां कीलय ह्लूं ह्लीं ह्लां बुद्धिं विनाशय ग्लौं हूं ह्लीं ॐ हुं फट्।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीवडवामुखी-अस्त्र-मन्त्रस्य वशिष्ठ ऋषिः, पंक्तिः छन्दः, रण-स्तम्भन-कारिणी श्रीबगलामुखी देवता, लं बीजं, हं शक्तिः, ईं कीलकं, श्रीबगलामुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीवशिष्ठ-ऋषये नमः शिरसि, पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे, रण-स्तम्भन-कारिणी श्रीबगलामुखी-देवतायै नमः हृदि, लं बीजाय नमः गुह्ये, हं शक्तये नमः पादयोः, ईं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीबगलामुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास—	कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
ॐ ह्लीं	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ॐ ह्लीं बगलामुखि	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
ॐ ह्लीं सर्व-दुष्टानां	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ॐ ह्लीं वाचं मुखं पदं स्तम्भय	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं
ॐ ह्लीं जिह्वां कीलय	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
ॐ ह्लीं बुद्धिं विनाशय ॐ ह्लीं स्वाहा	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

पीताम्बर-धरां देवीं द्वि-सहस्र-भुजान्वितां । सान्द्र-जिह्वां गदां चास्त्रं धारयन्तीं शिवां भजे ।।

द्वितीयास्त्र—उल्का-मुखी (५८ अक्षर) : ॐ ह्लीं ग्लौं बगलामुखि ॐ ह्लीं ग्लौं सर्व-दुष्टानां ॐ ह्लीं ग्लौं वाचं मुखं पदं ॐ ह्लीं ग्लौं स्तम्भय स्तम्भय ॐ ह्लीं ग्लौं जिह्वां कीलय ॐ ह्लीं ग्लौं बुद्धिं विनाशय ॐ ह्लीं ग्लौं ह्लीं ॐ स्वाहा ।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीउल्कामुखी-अस्त्र-मन्त्रस्य श्रीअग्नि-वराह ऋषिः, ककुप् छन्दः, जगत्-स्तम्भन-कारिणी श्रीउल्कामुखी देवता, ह्लीं बीजं, स्वाहा शक्तिः, ग्लौं कीलकं, श्रीउल्कामुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीअग्नि-वराह-ऋषये नमः शिरसि, ककुप्-छन्दसे नमः मुखे, जगत्-स्तम्भन-कारिणी-श्रीउल्का-मुखी-देवतायै नमः हृदि, ह्लीं बीजाय नमः गुह्ये, स्वाहा-शक्तये नमः पादयोः, ग्लौं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीउल्का-मुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास—प्रथमास्त्र-मन्त्र के समान कर एवं अङ्ग-न्यास

ध्यान—विलयानल-सङ्काशां वीरां वेद-समन्वितां । विराण्मयीं महा-देवीं स्तम्भनार्थं भजाम्यहं ।।

तृतीयास्त्र—जातवेद-मुखी (६१ अक्षर) : ॐ ह्लीं हसौं ह्लीं ॐ बगलामुखि सर्व-दुष्टानां ॐ ह्लीं हसौं ह्लीं ॐ वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय ॐ ह्लीं हसौं ह्लीं ॐ जिह्वां कीलय ॐ ह्लीं हसौं ह्लीं ॐ बुद्धिं नाशय नाशय ॐ ह्लीं हसौं ॐ स्वाहा ।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीजातवेद-मुखी-अस्त्र-मन्त्रस्य श्रीकालाग्नि-रुद्र ऋषिः, पंक्तिः छन्दः, श्रीजातवेद-मुखी देवता, ॐ बीजं, ह्लीं शक्तिः, हं कीलकं, श्रीजातवेद-मुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीकालाग्नि-रुद्र-ऋषये नमः शिरसि, पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे, श्रीजातवेद-मुखी-देवतायै नमः हृदि, ॐ बीजाय नमः गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, हं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीजातवेद-मुखी-देवताम्बा-प्रीतये जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास—प्रथमास्त्र-मन्त्र (पृष्ठ ४६) के समान कर एवं अङ्ग-न्यास कर ध्यान करे। यथा—

जातवेद-मुखीं देवीं देवतां प्राण-रूपिणीं। भजेऽहं स्तम्भनार्थं च चिन्मयीं विश्व-रूपिणीं।

चतुर्थास्त्र—ज्वाला-मुखी (१२० अक्षर) : ॐ ह्लीं रां रीं रूं रैं रौं प्रस्फुर प्रस्फुर बगलामुखि ॐ—१२ सर्व-दुष्टानां ॐ—१२ वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय ॐ—१२ जिह्वां कीलय कीलय ॐ—१२ बुद्धिं विनाशय विनाशय ॐ—१२ स्वाहा।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीज्वाला-मुखी-अस्त्र-मन्त्रस्य श्रीअत्रि ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्री ज्वाला-मुखी देवता, ॐ बीजं, ह्लीं शक्तिः, हं कीलकं, श्रीज्वाला-मुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीअत्रि-ऋषये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, श्रीज्वाला-मुखी-देवतायै नमः हृदि, ॐ बीजाय नमः गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, हं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीज्वाला-मुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

षडङ्ग-न्यास—प्रथमास्त्र-मन्त्र (पृष्ठ ४६) के समान कर एवं अङ्ग-न्यास कर ध्यान करे। यथा—

ज्वलत्-पद्मासन-युक्तां कालानल-सम-प्रभां। चिन्मयीं स्तम्भिनीं देवीं भजेऽहं विधि-पूर्वकम्॥

पञ्चमास्त्र—वृहद्-भानु-मुखी (१६० अक्षर)—ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः, ॐ बगलामुखि ॐ-१२ ॐ सर्व-दुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय स्तम्भय ॐ-१२, ॐ जिह्वां कीलय ॐ-१२, ॐ बुद्धिं नाशय ॐ-१२, ॐ ह्लीं ॐ स्वाहा।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबृहद्-भानु-मुखी अस्त्र-मन्त्रस्य श्रीसविता ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीबृहद-भानु-मुखी देवता, ह्लीं बीजं, ह्लीं शक्तिः, ॐ कीलकं, श्रीबृहद्-भानु-मुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीसविता-ऋषये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, श्रीबृहद्-भानु-मुखी-देवतायै नमः हृदि, ह्लीं बीजाय नमः गुह्ये, ह्लीं शक्तये नमः पादयोः, ॐ कीलकाय नमः सर्वाङ्गे, श्रीबृहद्-भानु-मुखी-देवताम्बा-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

षडङ्ग-न्यास—प्रथमास्त्र-मन्त्र (पृष्ठ ४६) के समान कर एवं अङ्ग-न्यास कर ध्यान करे। यथा—

कालानल-निभां देवीं ज्वलत्-पुञ्ज-शिरोरुहाम्, कोटि-बाहु-समायुक्तां वैरि-जिह्वा-समन्विताम्।
स्तम्भनास्त्र-मयीं देवीं दृढ़-पीन-पयोधराम्, मदिरा-मद-संयुक्तां बृहद्-भानु-मुखीं भजे॥

श्रीबगलोपासना-सम्बन्धी अन्य मन्त्र

१ श्रीबगलोपसंहार-विद्या (५८ अक्षर)—ग्लौं हुं ऐं क्रीं श्रीं कालि कालि महा-कालि एहि एहि काल-रात्रि आवेशय आवेशय महा-मोहे महा-मोहे स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर स्तम्भनास्त्र-शमनि हुं फट् स्वाहा।

२ तार्क्ष्य माला मन्त्र (२८ अक्षर)—ॐ क्षीं नमो भगवते क्षीं पक्षि-राजाय सर्वाभि-चार-ध्वंसकाय क्षीं ॐ फट् स्वाहा।

३ बगला-शापोत्कोलन-मन्त्र (३५ अक्षर)—ॐ ह्रूं ह्रूं क्लीं क्लीं क्लीं ऐं ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं बगला-शापमुत्कीलयोत्कीलय स्वाहा।

४ मुख-शोधन-मन्त्र—ऐं ह्रीं ऐं

५ प्राण-योजक मन्त्र (सात बार जपे)—ह्लीं मूलं ह्लीं

६ मन्त्र-चैतन्य (१०८ बार जपे हृदय में)—ईं मूलं ईं

७ दीपनी (हृदय में सात बार जपे)—ॐ मूलं ॐ

८ कुल्लुका (सिर पर जपे)—ॐ ह्रूं क्षौं

९ सेतु (हृदय में जपे)—ब्राह्मण-क्षत्रिय के लिये 'ॐ', वैश्य के लिये 'फट्', शूद्र के लिये 'ह्रीं'।

१० महा-सेतु (विशुद्ध चक्र—कण्ठ में जपे)—स्त्रीं

११ निर्वाण (मणिपुर चक्र—नाभि में जपे)—ॐ श्रं...क्षं मूलं ऐं श्रं...क्षं ॐ।

उपसंहार

इस निबन्ध में पहले-पहल श्री बगलामुखी की उपासना से सम्बन्धित मन्त्रों को क्रमपूर्वक एकत्र किया गया है। इन मन्त्रों में से अनेक के पाठान्तर भी दृष्टिगत होते हैं। उदाहरण के लिये 'चण्डी' के 'शाक्त-धर्म-विशेषांक' में पृष्ठ १६३ से १६९ तक के पृष्ठों में प्रकाशित 'श्रीबगलामुखी तन्त्रम्' को ध्यान से पढ़ें तो ३६ अक्षरवाले मन्त्र का एक दूसरा स्वरूप ज्ञात होगा। यही नहीं, उसके विनियोग, ऋष्यादि-न्यास, ध्यान आदि के सम्बन्ध में भी मन्त्र-महोदधि, शाक्त-प्रमोद, मन्त्र-महार्णव और सांख्यायन तन्त्र में कुछ-न-कुछ भिन्नता मिलती है, जिसका विवरण विस्तार से वहाँ दिया गया है। इसी प्रकार यहाँ जो मन्त्र संगृहीत हैं, उनके सम्बन्ध में भी पाठान्तर और विभिन्न स्वरूप मिलते हैं। उदाहरण के लिये 'श्री बगलामुखी रहस्यं' पृष्ठ ५६ के अनुसार अष्टाक्षर मन्त्र है—'ॐ ह्लीं आँ ह्लीं क्रों बगला।'

यह उस अष्टाक्षर मन्त्र से सर्वथा भिन्न है, जो सांख्यायन तन्त्र के अनुसार इस निबन्ध के क्रमांक ५ पर उद्धृत है। इसी प्रकार क्रमाङ्क ९ पर उद्धृत 'श्रीबगला-हृदय मन्त्र' सांख्यायन तन्त्र में ८० अक्षरों का बताया गया है किन्तु उसका जो मन्त्रोद्धार दिया गया है, उसका प्रारम्भ पाश-बीज 'आं' से होता है, प्रणव 'ॐ' का उल्लेख ही नहीं है किन्तु राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान द्वारा सन् १९७० में प्रकाशित सांख्यायन तन्त्र के पृष्ठ ११४ पर यह मन्त्र 'ॐ' सहित प्रकाशित किया गया है। कारण यह बताया है कि 'ॐ' के बिना मन्त्र की निर्दिष्ट अक्षर-संख्या ८० पूरी नहीं होती। वास्तव में हुआ यह कि उक्त मन्त्र का जो उद्धार मूल पाठ के पृष्ठ ७८ पर दिया है, उसके 'ममैव' शब्द के प्रति उद्धार-कर्ता का ध्यान नहीं गया और उसके स्थान पर मात्र 'मम' को ग्रहण किया। फलतः एक अक्षर की कमी हो गई, जिसकी पूर्ति उन्होंने 'ॐ' लगाकर कर ली। यह उनकी त्रुटि ही मानी जायगी। शुद्ध मन्त्र क्रमाङ्क ९ पर दे दिया गया है।

इसी हृदय-मन्त्र का उद्धार 'बगलामुखी-रहस्यं' के पृष्ठ ५७ पर दिया गया है किन्तु या तो वह सांख्यायन तन्त्र से भिन्न मन्त्र है या उसे उद्धृत करने में त्रुटि हुई है क्योंकि उसके अनुसार केवल ५३ अक्षरों का मन्त्र बनता है। यथा—

आं ह्लीं क्रों ग्लौं हुं ऐं क्लीं श्रीं ह्रीं बगलामुखि आवेशय आवेशय आं ह्लीं क्रों ब्रह्मास्त्र-रूपिणि एहि एहि आं ह्लीं क्रों मम हृदये चिरं तिष्ठ तिष्ठ हुं फट् स्वाहा।

'बगलामुखी-रहस्यं' में इस मन्त्र के अक्षरों की संख्या नहीं बताई है और न इसकी विशेषता बतानेवाले श्लोक ही उद्धृत किये हैं, जबकि 'सांख्यायन तन्त्र' के २८ वें पटल में स्पष्ट लिखा है कि—

अशीति - वर्ण - संयुक्तो बगला - हृदयं मनुः,
बन्ध्यामुन्मार्जयेद्वङ्गं बगला - हृदयेन च।
बन्ध्या पुत्र - वती चैव षण्मासाद्धि भवति ध्रुवम्,
बगला - हृदयेनैव त्रि - सप्तमभि - मन्त्रितम्॥

इस 'बगला-हृदय-मन्त्र' की महिमा भी विलक्षण है। वहीं कहा है—

न ध्यानं न च होमं च न जपं न च तर्पणम्,
सकृदुच्चारणान् मन्त्राच्चिन्तितं भवति ध्रुवम्।
न चाभिषेकं न च मन्त्र - दीक्षा,
न चात्र दिक् - काल - ऋतुश्च देवता।
न चापि पंचेन्द्रिय - निग्रहं च,
सकृत् स्मरन वै बगलाख्य हृन्मनुम्॥
बगला हृदयं मन्त्रं ब्रह्मादीनां च दुर्लभम्,
सकृत् स्मरण - मात्रेण वांछितं फलमाप्नुयात्।
दरिद्रोऽपि भवेच्छ्रीमान् सलक्ष्मी भवति पण्डितः,
चतुरो सुष्करश्चैव कीर्तिमान् निन्दको भवेत्॥

अधिक क्या, इस मन्त्र का नित्य १०८ जप करने मात्र से इसकी सिद्धि हो जाती है। फिर इसके द्वारा तीन या सात बार अभिमन्त्रित जल को पिलाने से रोगी रोग-मुक्त हो जाता है आदि कितने ही प्रयोग बताए हैं। अस्तु। इस विवरण से प्रतीत होता है कि 'बगलामुखी रहस्यं' में प्रकाशित मन्त्रोद्धार कदाचित् पूरा नहीं छप पाया है।

स्पष्ट है कि इस विषय में शोध किए जाने की बड़ी आवश्यकता है। आशा है कि इस निबन्ध से विज्ञ और अनुभवी आचार्यों का ध्यान इस ओर आकृष्ट होगा। भगवती श्रीबगला से सम्बन्धित मन्त्रों के उद्धार करने में अनेक साङ्केतिक शब्दों का सामना करना पड़ता है। उनमें से कुछ तो उपलब्ध बीज-कोष में भी नहीं मिलते। शोध-कर्ता साधक विद्वानों की सुविधा के लिए उन्हें यहाँ अकारादि-क्रम से दिया जा रहा है—

65

अंकुश-वीज...क्रों	प्रसाद...ह्सौं	वह्नि...र	शक्ति-वाराह...ग्लौं
अस्त्र ...फट्	बिन्दु ... (ं)	वह्नि-जाया...स्वाहा	शिव-वीज ...ह
काम-राज ...क्लीं	भुवनेशी...ह्रीं	वह्नि-पञ्चक...रां रीं रूं रें रौं	श्री-वीज ...श्रीं
गगनार्ण ...ह	भू-वाराह...ह्लूं	वर्म ...हुं	सोऽन्त ...ह
चतुर्थ स्वर...ई	भू-वीज ...ल	वाग्भव ...ऐं	स्तब्ध-माया...ह्लीं
तार ...ॐ	रति ...ई	वाराही ...'हुं' या 'हूं'	स्तम्भ-माया...ह्लीं
पाश-वीज ...आँ	रान्त ...ल	वेदादि ...ॐ	स्थिर-वीज ...ल
प्रणव ...ॐ	रेफ ...र	शक्ति-बीज...ह्रीं	स्थिर-माया...ह्लीं, ह्लूं

आशा है, इस संक्षिप्त 'बीज-कोष' से जिज्ञासु उपासकों को इस साङ्केतिक विषय को समझने में कुछ सुविधा होगी और यदि इस प्रसङ्ग में संशोधन या परिवर्धन की आवश्यकता होगी, तो विज्ञ साधक अपने विचार व्यक्त करने को उद्यत होंगे। ऐसे विचारों को 'चण्डी' में सधन्यवाद प्रकाशित किया जायगा।

अन्त में यह बात उल्लेखनीय है कि आपत्ति में पड़कर प्रायः लोग श्रीबगला का आश्रय लेते हैं और किसी के बताने से या स्वयं पुस्तक में पढ़कर आपत्ति का निवारण करने के उद्देश्य से मन्त्र का जप करने लगते हैं। यह उचित नहीं है। मन्त्र का काम्य-प्रयोग तभी फल देता है, जब प्रयोग-कर्त्ता उस मन्त्र का पुरश्चरण कर लेता है। विधिवत् मन्त्र की दीक्षा लेकर उसका पञ्चाङ्ग-पुरश्चरण करने से ही मन्त्र सिद्ध होता है। तब अभीष्ट कामना की पूर्ति के लिए उसका प्रयोग करना चाहिये।

सामान्यतः लोग सीधे ३६ अक्षरवाले मन्त्र की साधना करने लगते हैं। यह समीचीन नहीं प्रतीत होता। उचित तो यही मालूम होता है कि एकाक्षर से साधना प्रारम्भ कर यदि कोई साधना में अग्रसर हो, तो वह अवश्य सफल होगा। जो भी हो, यह बात तो अनुभवी गुरुओं के अधीन है।

हमारा निवेदन केवल इतना ही है कि हमने यहाँ जो कुछ लिखा है, वह इस उद्देश्य से कि जिज्ञासुओं को सैद्धान्तिक ज्ञान की प्राप्ति हो और वे इसके प्रकाश में गुरुदेव से दीक्षा प्राप्त कर साधना में अग्रसर हों। यदि ऐसा हुआ, तो मैं इस निबन्ध का लिखना सार्थक समझूँगा। श्रीपीताम्बरार्पणमस्तु।
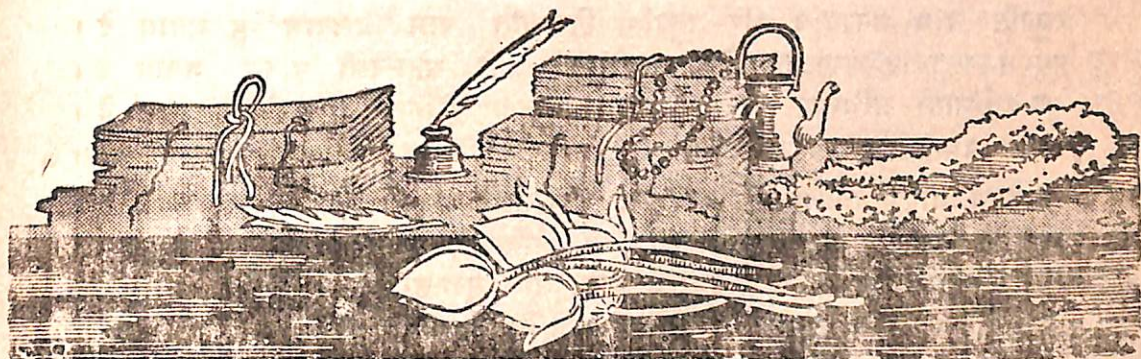
श्रीपीताम्बरा अष्टक

ध्यावत धनेश अमरेश हू रमेश नित्य, पूजत प्रजेश पदकञ्ज शम्भुरानी के।
गावत गजानन षडानन अनन्त वेद, पावन दयाल मातु गुन वरदानी के।
पावत परम पुरषारथ प्रसाद जन, लावत ललकि उर ध्यान वद्या-धानी के।
भावत 'सरोज' बल वैभव अपार, अरि-नाशक समृद्ध सदा बगला भवानी के॥ १

सोहत सुधाब्धि मध्य मणि-मय मण्डप मो, कनक सिंहासन पै बगला भवानी है।
पीत पट माल अङ्गराग रङ्ग इन्दु भाल, अरि जीभ गदा पाश वज्र की दधानी है।
कुण्डल किरीट हार ललित मुखाम्बुज की, मोहक अनूप छवि सोहत अमानी है।
सिद्ध सुर साधक समूह की 'सरोज' सदा, भुक्ति-मुक्ति-दायक सहायक शिवानी है॥ २

नाम लेत धावत न लावत विलम्ब अम्ब, आवत नसावत दुरन्त दुख-दीनता।
साजत सुजस सुख-सौरभ अपार अति, देत रिद्धि-सिद्धि सदा राखत न छीनता।
पौरुष परम पुरषारथ प्रदान करै, जारै जन-मन की समूल हू मलीनता।
पीत पटवारी गदा - पाश - वज्र-धारी सदा, सेवक 'सरोज' की सुधारत प्रवीनता॥ ३

ममता-मयी हौ छमता को है न ओर-छोर, चाहौ जौन बरजोर रचना रचाती हौ।
सुर-नर असुर चराचर की चर्चा कौन, चतुर चलावै जब ब्रह्म को नचाती हौ।
पालन सृजन बिनसन बहु रूप-रङ्ग, कौतुक कलित कहूँ प्रलय मचाती हौ।
शङ्कर भयङ्कर 'सरोज' जगदम्ब तुम्हीं, चण्ड ह्वै चबाती कहूँ दौरि कै बचाती हौ॥ ४

माँगौं कर जोरि गहि पद कंज मातु तोहिं, बगला भवानी वर-दानी यही वर दे।
कुटिल कुचाली दुष्ट देश-द्रोहियों के दल, सकल समेटि हठि चूर चूर कर दे।
भ्रष्टाचार अनाचार व्यभिचार का प्रसार, है अपार ताहि करि करुणा कुचर दे।
भूले भारतीय जनता के मंजु मानस में, आतमीय भव्य भावना के भाव भर दे॥ ५

अस्त्र-शस्त्र अन्न-वस्त्र यन्त्र-तन्त्र पूत मन्त्र, धातु उप-धातु के भँडार भूरि भर दे।
औरन की आस विसवास त्यागि अम्ब आशु, देश को पुरातन सिंहासन पै धर दे।
जागै जन-जन में स्वदेश अनुराग जोति, पूर्व इतिहास का विकास मातु कर दे।
हेकड़ हठीले गरबीले वैरि दल-बल, हेरि हेरि घेरि घेरि दौरि दौरि दर दे॥ ६

रघुपति राम घनश्याम वीर यदुपति, द्विज-पति राम बलराम हू बनाय दे।
हनुमत महावीर रणधीर भीम बली, वीर-व्रती महा-रथी पारथ जनाय दे।
देश-धर्म-मानी अभिमानी परताप शिवा, नानक गोविन्द गुण गौरव गनाय दे।
वल्लभ जवाहर सुभाष आदि वीरन के, वीरता वितान विश्व-नभ में तनाय दे॥ ७

रामकृष्ण गोरख विवेकानन्द अरविन्द, मोतीलाल स्वामी सिद्ध सुकुल जगाय दे।
देश-हित साधना में शाक्त साधकों को अम्ब, अविलम्ब अवलम्ब बनि कै लगाय दे।
व्यापक परम ब्रह्म विश्व में विराजै एक, साजै सुख-साज भेद-भावना भगाय दे।
दुष्ट दुराचारी दैत्य दानव रूप मानवों को, मानवीय प्रीति रीति रस में पगाय दे॥ ८
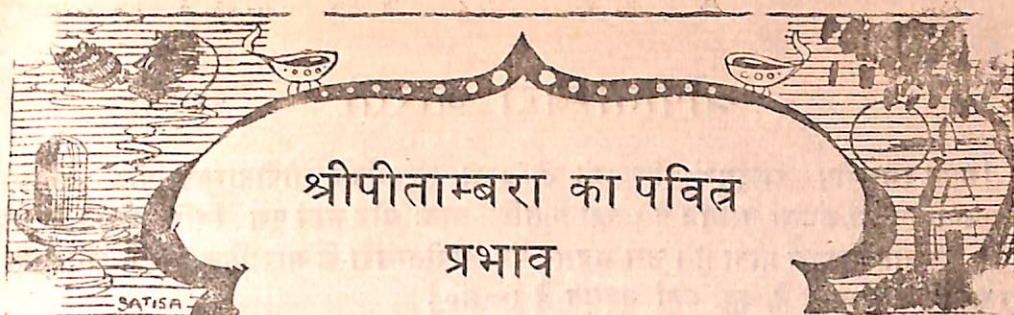
परमाराध्या पीताम्बरा जी की पूजा पापों और तापों को मिटा डालती है। विविध बाधाओं को विनष्ट करनेवाली और अखिल अभिलाषाओं को परिपूर्ण कर देनेवाली जगज्जननी श्रीपीताम्बरा जी की आराधना को जो लोग श्रद्धा-भक्ति के सहित करते हैं, उन्हें दुर्लभतम भोग भी अनायास ही मिलते हैं।

'वगला' 'वगला' इस प्रकार निरन्तर जपनेवाले लोग शत्रु-रहित होकर आनन्दित रहते हैं।

भोगों की तो बात ही क्या है, श्रीपीताम्बरा जी की अर्चा से मोक्ष तक सुलभ हो जाता है।

पीताम्बरा जी को जो लोग पीताम्बर चढ़ाते हैं, उनके कुल में लोगों को सदा पीताम्बर पहिनने का अवसर मिलता रहता है। पीत-पुष्पों की अष्टोत्तरशत मालायें जो लोग अर्पित करते हैं, उनका कुटुम्ब सर्वदा प्रफुल्लित और सुगन्धित बना रहता है।

'पीताम्बरा' 'पीताम्बरा' कहकर जो लोग माता जी को पुकारते हैं, माता उनके विविध उपद्रवों को जड़-सहित उखाड़ डालती हैं।

मात्र 'पीताम्बरा' नाम का जापक सर्व-बाधा-रहित होकर आनन्द-सिन्धु में स्नान करने का अधिकारी बन जाता है।

पीत आसन पर पीत-वस्त्र पहनकर पीत सामग्रियों द्वारा माता पीताम्बरा जी की अर्चा करके जो लोग हरिद्रा की माला से पीताम्बरा जी का महामन्त्र जपते हैं, वे लोग निश्चिन्त हो जाते हैं।

पीताम्बरा जी की सुवर्ण प्रतिमा सर्व-सिद्धि-प्रदा और रजत प्रतिमा लक्ष्मी-प्रदा मानी गयी है परन्तु प्रतिमा-निर्माण-वेला का ज्ञान अपेक्षित है। शत्रु-पराजय हेतु मङ्गल-वार को निर्मित प्रतिमा की शरण लेनी चाहिये। आनन्द की अभिवृद्धि के लिये गुरुवार-निर्मित प्रतिमा का उपयोग श्रेष्ठ माना गया है।

कोई ऐसा कार्य नहीं है, जो श्रीपीताम्बरा जी की पूजा से सफल न हो सके अर्थात् श्रीपीताम्बरा जी की पूजा से ऐहिक और पारलौकिक समस्त कार्य सफल हो ही जाते हैं।

अपने भक्तों की अभिलाषा को पूर्ण कर देना ही श्रीपीताम्बरा जी का स्वभाव है।

जिस पुरुष के द्वारा जगन्माता सनातनी श्री पीताम्बरा जी का स्मरण किया जा चुका है, उसके द्वारा सम्पूर्ण पूजा की जा चुकी है, ऐसा समझना चाहिये क्योंकि जगदम्बा श्री पीताम्बरा जी सर्व-सिद्धियों को प्रदान करनेवाली हैं।

महर्षि लोमश जी ने देवर्षि नारद जी से कहा है कि हे देवर्षे ! एक बार 'पीताम्बरा' यह नाम उच्चारण करनेवाला व्यक्ति कोटि वाजपेय और कोटि राजसूय यज्ञों का फल प्राप्त कर लेता है।

पृथ्वी पर एक बार 'पीताम्बरा' यह नाम लिख कर जो उसकी प्रदक्षिणा कर लेता है, उसे सम्पूर्ण पृथ्वी-मण्डल की प्रदक्षिणा कर लेने का फल प्राप्त हो जाता है।

—पण्डित चन्द्रिकाप्रसाद पाठक शास्त्री

श्रीपीताम्बरा आरती

[सतत स्मरणीय 'राष्ट्रगुरु' श्रीस्वामी जी द्वारा संस्थापित 'श्रीपीताम्बरा-पीठ' दतिया (म० प्र०) शक्ति-उपासना का आदर्श संस्थान है। वहाँ प्रतिदिन प्रातः और सायं पूर्ण विधि-विधान के साथ श्री जगदम्बा का अर्चनादि सम्पन्न होता है। उस अवसर पर श्रीपीताम्बरा के आरार्तिक-क्रम में जो स्तुति भक्त-जनों द्वारा सस्वर पढ़ी जाती है, वही यहाँ उद्धृत है।—सं०]

जय पीताम्बर - धारिणि जय सुखदे वरदे, मातर्जय सुखदे वरदे !
भक्त - जनानां क्लेशं, भक्त - जनानां क्लेशं सततं दूर-करे ॥ जय देवि, जय देवि ॥१

असुरैः पीडित - देवास्तव शरणं प्राप्ताः, मातस्तव शरणं प्राप्ताः ।
धृत्वा कौर्म - शरीरं, धृत्वा कौर्म - शरीरं दूरी - कृत-दुःखम् ॥ जय देवि, जय देवि ॥२

मुनि - जन - वन्दित - चरणे, जय विमले बगले, मातर्जय विमले बगले !
संसारार्णव - भीतिं, संसारार्णव - भीतिं नित्यं शान्ति - करे ॥ जय देवि, जय देवि ॥३

नारद - सनक - मुनीन्द्रैर्ध्यातं पद - कमलं, मातर्ध्यातं पद - कमलम् ।
हरि-हर-द्रुहिण-सुरेन्द्रैः, हरि-हर-द्रुहिण-सुरेन्द्रैः सेवित-पद-युगलं ॥जय देवि, जय देवि॥४

काञ्चन-पीठ-निविष्टे मुद्गर-पाश-युते, मातर्मुद्गर-पाश-युते ।
जिह्वा-वज्र-सुशोभित, जिह्वा-वज्र-सुशोभित पीतांशुक-लसिते ॥ जय देवि, जय देवि॥५

विन्दु-त्रिकोण-षडस्रैरष्ट-दलोपरि ते, मातरष्ट-दलोपरि ते ।
षोडश-दल-गत-पीठं, षोडश-दल-गत - पीठं भूपुर-वृत्त-युतम् ॥ जय देवि, जय देवि॥६

इत्थं साधक - वृन्दश्चिन्तयते रूपं, मातश्चिन्तयते रूपम् ।
शत्रु-विनाशक-बीजं, शत्रु-विनाशक-बीजं धृत्वा हृत्-कमले ॥जय देवि, जय देवि ॥७

अणिमादिक-बहु-सिद्धि लभते सौख्य-युतां, मातर्लभते सौख्य-युताम् ।
भोगान् भुक्त्वा सर्वान्, भोगान् भुक्त्वा सर्वान् गच्छति विष्णु-पदं ॥जय देवि, जय देवि॥८

पूजा - काले कोऽपि आर्तिक्यं पठते, मातरार्तिक्यं पठते ।
धन-धान्यादि-समृद्धो, धन-धान्यादि-समृद्धः सान्निध्यं लभते ॥जय देवि, जय देवि॥९
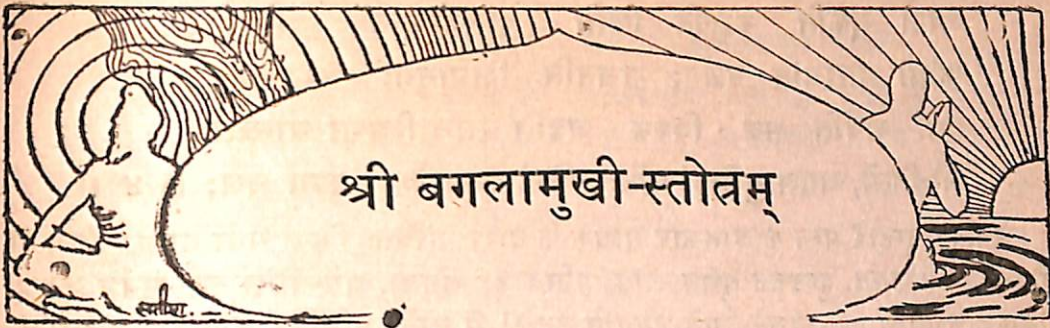
चलत् - कनक - कुण्डलोल्लसित - चारु - गण्ड - स्थलाम्,
लसत् - कनक - चम्पक - द्युतिमदिन्दु - बिम्बाननाम् ।
गदा - हत - विपक्षकां कलित - लोल - जिह्वाञ्चलाम्,
स्मरामि बगलामुखीं विमुख - वाङ् - मनस् - स्तम्भिनीम् ॥ १ ॥

अर्थात्—चंचल सुवर्ण कुण्डलों से शोभित कपोलवाली तथा कनक एवं चम्पा के पुष्प सदृश शरीर की कान्ति वाली चन्द्रमुखो, गदा-प्रहार से विपक्षियों को सदा विनष्ट करनेवाली, सुन्दर चञ्चल-जीभवाली, विमुखों की वाणी और मन का स्तम्भन करनेवाली बगलामुखी को स्मरण करता हूं ।

पीयूषोदधि - मध्य - चारु - विलसद् - रत्नोज्ज्वले मण्डपे,
तत् - सिंहासन - मूल - पातित - रिपुं प्रेतासनाध्यासिनीम् ।
स्वर्णाभां कर - पीड़ितारि - रसनां भ्राम्यद् गदां बिभ्रतीम्,
यस्त्वां ध्यायति यान्ति तस्य विलयं सद्योऽथ सर्वापदः ॥ २ ॥

अर्थात्—जो भक्त साधक सुधा-समुद्र के बीच में रत्नोज्ज्वल मण्डप में अनेकानेक रत्न-जटित स्वर्ण-सिंहासन पर आसीन, सुवर्ण कान्तिवाली, एक हाथ से शत्रु को जोभ और दूसरे से घूमती हुई गदा को धारण किये, प्रेतासन पर बैठी हुई, शत्रुओं के शिरों को झुकानेवाली तुमको ध्यान करता है, उसकी समस्त आपदायें तुरन्त समाप्त हो जाती हैं ।

देवि ! त्वच्चरणाम्बुजार्चन - कृते यः पीत - पुष्पाञ्जलिम्,
भक्त्या वाम - करे निधाय च मनुं मन्त्री मनोज्ञाक्षरम् ।
पीठ - ध्यान - परोऽथ कुम्भक - वशाद् बीजं स्मरेत् पार्थिवम्,
तस्यामित्र - मुखस्य वाचि हृदये जाड्यं भवेत् तत्क्षणात् ॥ ३ ॥

अर्थात्—हे देवि बगले ! जो भक्त तुम्हारे चरण-कमलों के अर्चन में पीत-पुष्पों की अञ्जलि भक्ति-पूर्वक निज वाम कर में रख कर पीठ-ध्यान में तत्पर होकर कुम्भक प्राणायाम द्वारा तुम्हारे मनोज्ञ (मनोहर) अक्षरवाले मन्त्र भूमि-बीज (लं) का स्मरण करता है, उसके शत्रु के मुख-वचन और हृदय में तुरन्त जड़ता व्याप्त हो जाती है ।

वादी मूकति रङ्कति क्षिति - पतिर्वैश्वानरः शीतति,
क्रोधी शाम्यति दुर्जनः सुजनति क्षिप्रानुगः खञ्जति ।
गर्वी खर्वति सर्व - विच्च जडति त्वन्मन्त्रिणा यन्त्रितः,
श्री-नित्ये, बगलामुखि ! प्रति - दिनं कल्याणि ! तुभ्यं नमः ।। ४ ।।

अर्थात्—तुम्हारे मन्त्र के जानकार साधक के द्वारा यंत्रित किया गया वादी गूंगा, राजा रंक, अग्नि शीतल, क्रोधो शान्त, दुष्टजन सुजन, तीव्र गतिवाला लँगड़ा, घमण्डी छोटा, सर्वज्ञ जड़ हो जाता है । इसलिए हे कल्याणि, श्री-स्वरूपे-नित्ये-भगवति बगले! मैं तुम्हें प्रतिदिन नमस्कार करता हूं ।

मन्त्रस्तावदलं विपक्ष - दलने स्तोत्रं पवित्रं च ते,
यन्त्रं वादि - नियन्त्रणं त्रि - जगतां जैत्रं च चित्रं च ते ।
मातः ! श्रीबगलेति नाम ललितं यस्यास्ति जन्तोर्मुखे,
त्वन्नाम - स्मरणेन संसदि मुख - स्तम्भो भवेद् वादिनाम् ।। ५ ।।

अर्थात्—विपक्षियों के दमनार्थ तुम्हारा मन्त्र ही पर्याप्त है और तद्वत् पवित्र स्तोत्र भी । वादियों के नियन्त्रण के लिए त्रिलोक प्रसिद्ध तुम्हारा विजयशाली यन्त्र भी विचित्र है। हे मां ! 'श्री बगला' यह ललित तुम्हारा नाम जिस साधक के मुख को शोभित करता है, वह भाग्यशाली है, क्योंकि सभा में तुम्हारे नाम का स्मरण करते हीं वादियों का मुख स्तम्भित हो जाता है ।

दुष्ट - स्तम्भनमुग्र - विघ्न - शमनं दारिद्र्य - विद्रावणम्,
भूभृद् - संदमनं चलन्मृग - दृशां चेतः समाकर्षणम् ।
सौभाग्यैक - निकेतनं सम - दृशः कारुण्य - पूर्णेक्षणम् ।
मृत्योर्मारणमाविरस्तु पुरतो मातस्त्वदीयं वपुः ।। ६ ।।

अर्थात्—दुष्टजनों का स्तम्भक, उग्र विघ्नों का शामक, दरिद्रता-निवारक, राजाओं का दमन-कारक, मृगाक्षियों के चञ्चल चित्त का समाकर्षक एवं सम-दर्शियों के लिये, सौभाग्य का एकमेव निकेतन, करुणापूर्ण नेत्रोंवाला और मृत्यु का भी मारक तुम्हारा सुन्दर शरीर हे माँ ! मेरे आगे प्रकट हो ।

मातर्भञ्जय मद् - विपक्ष - वदनं जिह्वां च संकीलय,
ब्राह्मीं मुद्रय दैत्य - देव - धिषणामुग्रां गतिं स्तम्भय ।
शत्रूँश्चूर्णय देवि ! तीक्ष्ण - गदया गौराङ्गि, पीताम्बरे !
विघ्नौघं बगले ! हर प्रणमतां कारुण्य - पूर्णेक्षणे ।। ७ ।।

अर्थात्—हे गौरांगि, पीताम्वरे, माँ देवि मेरे विपक्षियों के मुख को तोड़ दो, उनकी जिह्वा को कील दो, वाणी को बन्द करो, देव और दैत्यों की उग्र बुद्धितथा गतियों को स्तम्भित करो, अपनी तीक्ष्ण गदा से शत्रुओं को चूर्ण कर दो, अपनी करुणा-पूर्ण दृष्टि से भक्तों के विघ्नों के समूह को दूर करो ।

मातर्भैरवि ! भद्र - कालि विजये ! वाराहि ! विश्वाश्रये!
श्रीविद्ये ! समये ! महेशि! बगले ! कामेशि ! वामे रमे !

मातङ्गि ! त्रिपुरे ! परात्पर - तरे ! स्वर्गापवर्ग - प्रदे !

दासोऽहं शरणागतः करुणया विश्वेश्वरि ! त्राहि माम् ॥ ८ ॥

अर्थात्—हे मां बगले ! भैरवी, भद्रकाली, वाराही, भुवनेश्वरी, श्रीविद्या, षोडशी, बालात्रिपुर-सुन्दरी, कमला आदि सब तुम्हीं हो, स्वर्ग मोक्ष भी तुम्हीं देती हो, परात्पर ब्रह्म भी तुम हो, मैं तुम्हारा शरणागत हूँ । हे विश्वेश्वरि ! करुणा करके मेरी रक्षा करो ।

संरम्भे चौर-सङ्घे प्रहरण - समये बन्धने व्याधि - मध्ये,

विद्या - वादे विवादे प्रकुपित-नृपतौ दिव्य- काले निशायाम् ।

वश्ये वा स्तम्भने वा रिपु - वध - समये निर्जने वा वने वा,

गच्छँस्तिष्ठँस्त्रि - कालं यदि पठति शिवं प्राप्नुयादाशु धीरः ॥ ९ ॥

अर्थात्—हे देवि ! विप्लव-काल में, चोरों के समूह में, शत्रु पर प्रहार-काल में, बन्धन में, व्याधि-पीड़ा में, विद्या-सम्बन्धी विवाद में, मौखिक कलह में, नृप कोप में और रात्रि के दिव्य-काल में, वश्य कार्य में, स्तम्भन में तथा शत्रु-वध के समय, निर्जन स्थान में अथवा वन में कहीं भी चलता हुआ, बैठा हुआ तीनों काल में जो साधक तुम्हारे स्तोत्र का पाठ करता है, वह धीर पुरुष शीघ्र ही कल्याण प्राप्त करता है ।

त्वं विद्या परमा त्रिलोक - जननी विघ्नौघ - संच्छेदिनी,

योषाकर्षण - कारिणी त्रि - जगतामानन्द - सम्वर्द्धिनी ।

दुष्टोच्चाटन - कारिणी पशु - मनः - सम्मोह - सन्दायिनी,

जिह्वा - कीलन - भैरवी विजयते ब्रह्मास्त्र - विद्या परा ॥ १० ॥

अर्थात्— तुम परमा विद्या हो, त्रिलोकों की जननी हो, विघ्न-समूह की नाशिका हो, स्त्रियों को आकर्षित करनेवाली हो, जगत्-त्रय का आनन्द बढ़ानेवाली हो, दुष्टों का उच्चाटन करनेवाली हो, पशु-जन के मन को सम्मोह देनेवाली हो और शत्रु को जिह्वा-कीलन करने में भैरवी हो । सदैव विजय देनेवाली परा ब्रह्मास्त्र-विद्या हो ।

विद्या - लक्ष्मीर्नित्य - सौभाग्यमायुः, पुत्रैः पौत्रैः सर्व - साम्राज्य - सिद्धिः,

मानं भोगो वश्यमारोग्य-सौख्यं, प्राप्तं सर्वं भू - तले त्वत् - परेण ॥११॥

अर्थात्—सम्पूर्ण विद्यायें, लक्ष्मी, नित्य सौभाग्य, दीर्घायु, पुत्र-पौत्रादि-सहित सर्व-साम्राज्य-सिद्धि, मान, भोग, वयश्ता, आरोग्यता, सुख आदि समस्त जो-जो भी मनुष्य को प्राप्त होना चाहिये, वह सब तुम्हारी कृपा से इस पृथ्वी पर ही साधक को प्राप्त होता है ।

यत् - कृतं जप - सन्नाहं गदितं परमेश्वरि! दुष्टानां निग्रहार्थाय तद् गृहाण नमोऽस्तु ते ॥१२

अर्थात्—हे परमेश्वरि ! दुष्टों के निग्रहार्थ तुम्हारे विषय में जो मैंने जपादि पूर्वक कहा है, उसे तुम स्वीकार करो, तुम्हें नमस्कार है ।

पीताम्बरां च द्वि - भुजां त्रि - नेत्रां गात्र - कोमलाम् ।

शिला - मुद्गर - हस्तां च स्मरेत् तां बगलामुखीम् ॥ १३ ॥

अर्थात्—कोमल शरीरवाली, वज्र और मुद्गर हाथों में धारण करनेवाली, त्रिनेत्र एवं दो भुजाओंवाली पीताम्बरा बगलामुखी का मैं स्मरण करता हूँ।

ब्रह्मास्त्रमिति विख्यातं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम्।
गुरु - भक्ताय दातव्यं न देयं यस्य कस्यचित् ॥ १४ ॥

अर्थात्—यह विद्या ब्रह्मास्त्र नाम से तीनों लोकों में विख्यात है और विशेष कर सुना गया है कि इसे गुरु-भक्त साधक को ही बताना चाहिये अन्य जिस किसी को नहीं।

नित्यं स्तोत्रमिदं पवित्रमिह यो देव्याः पठत्यादरात्,
धृत्वा यन्त्रमिदं तथैव समरे बाहौ करे वा गले।
राजानोऽप्यरयो मदान्ध - करिणः सर्पा मृगेन्द्रादिकाः,
ते वै यान्ति विमोहिता रिपु - गणा लक्ष्मी स्थिरा सर्वदा ॥ १५ ॥

अर्थात्—भगवती पीताम्बरा के इस पवित्र स्तोत्र का पाठ जो साधक नित्य आदर-पूर्वक करता है तथा इनके यन्त्र को बाहु में अथवा कर में या गले में युद्धकाल में धारण करता है तो राजा एवं शत्रु-गण विमोहित हो जाते हैं। इतना ही नहीं, ऐसे साधक को लक्ष्मी को भी स्थिरता प्राप्त होती है।

श्रीबगला-प्रातः-स्मरणम्

प्रातः स्मरामि मधु - पूर्ण - सुधा - समुद्रम्,
तन्मध्य - दिव्य - मणिद्वीप - मनोहरं च।
कल्पाटवीममित - रत्न - विभूष - कोटम्,
श्रीमण्डपं विशद - शोभि हृदि स्फुरन्तम् ॥ १ ॥

प्रातर्नमामि मधुसूदन - वीक्षणाजैः,
नीराजितं द्युति - नतैः मुकुट - प्रदीपैः।
सौवर्ण - वर्णमतुलं तं पाद - पीठम्,
देव्या निवेषित - सदंघ्रि - द्वयं ललामम् ॥ २ ॥

प्रातर्भजामि भव - भूरि - भयापहां ताम्,
पीताम्बरां कर - सु - मुद्गर - वैरि - जिह्वाम्।
सु - स्तम्भिनीं सु - वदनां करुणार्द्र - चित्ताम्,
सृष्ट्युत्पत्ति - स्थिति - नियामिनि ब्रह्म - विद्याम् ॥ ३ ॥

श्रीबगला पञ्जर स्तोत्र

[यह स्तोत्र शैवागम-सारोक्त है। इसी स्तोत्र के उपयोग से मथुरा (उ० प्र०) के प्रख्यात स्व० विष्णु भट्ट अथर्ववेदी ने विपुल यशार्जन किया था]

नित्य-कर्म करके स्व-शरीर-रक्षार्थ इस पञ्जर-स्तोत्र का पाठ करना चाहिये। पहले हाथ में जल लेकर सङ्कल्प पढ़े। फिर विनियोगादि सविधि करे। यथा—

विनियोग—अस्य श्रीमत्-पीताम्बरा-बगलामुखी-पञ्जर-रूप-मन्त्रस्य भगवान् नारद ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। जगद्-वशङ्करी पीताम्बरा बगला देवता। ह्लीं बीजम्। स्वाहा शक्तिः। क्लीं कीलकम्। अमुक-गोत्रोत्पन्नस्य अमुक शर्मणः (वर्मणः, गुप्तस्य, दासस्य वा) मम स्व-शरीर-रक्षा-पूर्वकं पर-सैन्य-मन्त्र-तन्त्र-यन्त्रादि-विपक्ष- क्षयार्थे स्वाभीष्ट-सिद्धये च जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—भगवते नारद-ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, जगद्-वशङ्करी-पीताम्बरा-बगला-देवतायै नमः हृदये, ह्लीं बीजाय नमः दक्ष-स्तने, स्वाहा-शक्तये नमः वाम-स्तने, क्लीं कीलकाय नमः नाभौ, मम स्व-शरीर-रक्षा-पूर्वकं स्वाभीष्ट-सिद्धये विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

कर-शुद्धि-न्यास मूल-मन्त्र से करे।

षडङ्ग-न्यास—	कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
ह्लां	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ह्लीं	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
ह्लूं	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ह्लैं	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं
ह्लौं	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
ह्लः	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

व्यापक न्यास—मन्त्रराज से करे।

ध्यान—मध्ये सुधाब्धि-मणि-मण्डप-रत्न-वेदी-सिंहासनोपरि-गतां परि-पीत-वर्णाम्।
पीताम्बराभरण-माल्य-विभूषिताङ्गीं देवीं स्मरामि धृत-मुद्गर-वैरि-जिह्वाम्॥

मानस-पूजन—श्रीपीताम्बरायै नमः लं पृथिव्यात्मकं गन्धं परि-कल्पयामि।
श्रीपीताम्बरायै नमः हं आकाशात्मकं पुष्पं परि-कल्पयामि।
श्रीपीताम्बरायै नमः यं वाय्वात्मकं धूपं परि-कल्पयामि।
श्रीपीताम्बरायै नमः रं तैजसात्मकं दीपं परि-कल्पयामि।
श्रीपीताम्बरायै नमः वं अमृतात्मकं नैवेद्यं परि-कल्पयामि।

अब योनि-मुद्रा से प्रणाम कर पञ्जर-न्यास करे। यथा—

सूत उवाच

सहस्रादित्य-सङ्काशं शिवं साम्बं सनातनम्।
प्रणम्य नारदः प्राह विनम्र-नत-कन्धरः॥

श्रीनारद उवाच

भगवन्, साम्ब, तत्वज्ञ, सर्व-दुःखापहारक!
श्रीमत्-पीताम्बरा-देव्याः पंजरं पुण्यदं सदा॥

प्रकाशय विभो, नाथ! कृपां कृत्वा ममोपरि ।
यद्यहं तव पादाब्ज-धूलि-धूसरितः सदा ॥

श्रीशिव उवाच

पंजरं तत्प्रवक्ष्यामि देव्याः पाप-प्रणाशनम् ।
यं प्रविश्य न बाधन्ते बाणैरपि नरा भुवि ॥

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं

श्रीमत्-पीताम्बरा देवी बगला बुद्धि-वर्द्धिनी ।
पातु मामनिशं साक्षात्-सहस्रार्क-युत-द्युतिः ॥
शिखादि-पाद-पर्यन्तं वज्र-पंजर-धारिणी ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं

ब्रह्मास्त्र-संज्ञा या देवी पीताम्बर-विभूषिता ॥
श्रीबगला ह्यवत्वत्र चोर्ध्व-भागं महेश्वरी ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं

कामांकुशा कला पातु बगला-शास्त्र-बोधिनी॥
पीताम्बरा सहस्राक्षा ललाटं कामितार्थदा ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं

पातु मां बगला नित्यं पीताम्बर सुधारिणी ॥
कर्णयोश्चैव युग - पदति-रत्न-प्रपूजिता ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं

पातु मां बगला-देवी नासिकां मे गुणाकरा ॥
पीत-पुष्पैः पीत-वस्त्रैः पूजिता वेद-दायिनी ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं

पातु मां बगला नित्यं ब्रह्म-विष्ण्वादि-सेविता॥
पीताम्बरा प्रसन्नास्या नेत्रयोर्युग-पद्-भ्रुवौ ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं

पातु मां बगला नित्यं बलदा पीत-वस्त्र-धृक् ॥
अधरोष्ठौ तथा दंतान् जिह्वां च मुखगा समाः ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं

पातु मां बगला देवी पीताम्बर-सुधारिणी ॥
गले हस्तौ तथा बाहौ युग-पद्-बुद्धिदासताम् ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं

पातु मां बगला देवी दिव्य-स्रगनुलेपना ॥
हृदये च स्तनौ नाभौ वटावपि कृशोदरी ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं

पातु मां बगला नित्यं पीत-वस्त्रावृता घना ॥
जंघायां च तथा चोरौ गुल्फयोश्चाति-वेगिनी ।
अनुक्रमेण यत्-स्थानं त्वक्-केश-नख-लोमसे ॥
असृङ्-मासं तथास्थीनि संधयः सन्ति मे पराः ।
ताः सर्वा बगला देवी रक्षेन्मे च मनोहरा ॥

श्रीशिव उवाच

इत्येतद् वरदं गोप्यं कलावपि विशेषतः ।
पंजरं बगला-देव्या घोर-दारिद्र्य-नाशनं ॥
पंजरं यः पठेत् भक्त्या स विघ्नैर्नाभि-भूयते ।
अव्याहत-गतिश्चापि ब्रह्मा-विष्ण्वादि-सत्परे ॥
स्वर्गे मर्त्ये च पाताले तारकं परमाद्भुतम् ।
न बाधन्ते नर-व्याघ्र-पंजरस्थं कदाचन ॥
अतो भक्तैः कौलिकैश्च स्व-रक्षार्थं सदैव हि ।
पठनीयं प्रयत्नेन सर्वानर्थ-विनाशनम् ॥
महा-दारिद्र्य-शमनं सर्व-माङ्गल्य-वर्धनम् ।
विद्या-विनय-सत्सौख्यं महा-सिद्धि-करं परं ॥
यः पंजरं प्रविश्यैवं मन्त्रं जपति वै भुवि ।
कौलिको वाऽकौलिको वा व्यासवद्विचरेद्भुवि॥
इदं ब्रह्मास्त्रविद्याया पंजरं साधु गोपितम् ।
पठेत् स्मरेद् ध्यानसंस्थः स जयेन्मरणं नरः ॥
चन्द्र-सूर्य-समो भूत्वा वसेत् कल्पायुतं भुवि ।

सूत उवाच

इति कथितमशेषं श्रेयसामादि-बीजं ॥
भव-शत-दुरितघ्नं ध्वस्त-मोहान्धकारम् ।
स्मरणमतिशयेन प्रातरेवाऽत्र मर्त्यो ॥
यदि विशति सदा वै पंजरं पण्डितः स्यात् ॥
अन्त में 'श्रीपीताम्बरार्पणमस्तु' कहकर जल छोड़े ।

श्रीबगला कीलक-स्तोत्रम्

ह्लीं ह्लीं ह्लींकार - वाणे, रिपु - दल - दलने, घोर - गम्भीर - नादे !
ह्रीं ह्रीं ह्रींकार - रूपे, मुनि - गण - नमिते, सिद्धिदे, शुभ्र - देहे !
भ्रों भ्रों भ्रोंकार - नादे, निखिल - रिपु - घटा - त्रोटने, लग्न - चित्ते !
मातर्मातर्नमस्ते सकल - भय - हरे ! नौमि पीताम्बरे ! त्वाम् ॥ १ ॥
क्रौं क्रौं क्रौमीश - रूपे, अरि - कुल - हनने, देह - कीले, कपाले !
हस्त्रौं हस्त्रौं - स्वरूपे, सम - रस - निरते, दिव्य - रूपे, स्वरूपे !
ज्रौं ज्रौं ज्रौं जात - रूपे, जहि जहि दुरितं जम्भ - रूपे, प्रभावे !
कालि, कङ्काल - रूपे, अरि - जन - दलने देहि सिद्धिं परां मे ॥ २ ॥
हस्त्रां हस्त्रीं च हस्त्रैं त्रिभुवन - विदिते, चण्ड - मार्तण्ड - चण्डे !
ऐं क्लीं सौं कौल - विधे, सतत - शम - परे ! नौमि पीत - स्वरूपे !
द्रौं द्रौं द्रौं दुष्ट - चित्ताऽऽदलन - परिणते, बाहु - युग्म - त्वदीये !
ब्रह्मास्त्रे, ब्रह्म - रूपे, रिपु - दल - हनने, ख्यात - दिव्य - प्रभावे ॥ ३ ॥
ठं ठं ठङ्कार - वेशे, ज्वलन - प्रतिकृति - ज्वाला - माला - स्वरूपे !
धां धां धां धारयन्तीं रिपु - कुल - रसनां मुद्गरं वज्र - पाशम् ।
डां डां डां डाकिन्याद्यैर्डिमक - डिमडिमं डमरुं वादयन्तीम् ॥ ४ ॥
मातर्मातर्नमस्ते प्रबल - खल - जनं पीडयन्तीं भजामि ।
वाणीं सिद्धि - करे ! सभा - विशद - मध्ये वेद - शास्त्रार्थदे !
मातः, श्रीबगले, परात्पर - तरे ! वादे विवादे जयम् ।
देहि त्वं शरणागतोऽस्मि विमले, देवि, प्रचण्डोद्धृते !
माङ्गल्यं वसुधासु देहि सततं सर्व - स्वरूपे, शिवे ॥ ५ ॥
निखिल-मुनि-निषेव्यं स्तम्भनं सर्व-शत्रोः, शम-परमिह नित्यं ज्ञानिनां हार्द-रूपम् ।
अहरहर-निशायां यः पठेद् देवि ! कीलम्, स भवति परमेशि ! वादिनामग्र-गण्यः ॥६॥

श्रीबगला-हृदय-स्तोत्रम्

श्री देव्युवाच—

इदानीं खलु मे देव ! बगला-हृदयं प्रभो ! कथयस्व महा-देव ! यद्यहं तव वल्लभा ।।

श्रीईश्वरोवाच—

साधु साधु महा-प्राज्ञे ! सर्व-तन्त्रार्थ-साधिके ! ब्रह्मास्त्र-देवतायाश्च हृदयं वच्मि तत्त्वतः ।।

ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्व-दुष्टानां वाचं पदं मुखं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा ।। [३६ अक्षर]

ॐ ह्लीं हृदयाय नमः । बगलामुखि शिरसे स्वाहा । सर्व - दुष्टानां शिखायै वषट् । वाचं मुखं पदं कवचाय हुं । जिह्वां कीलय नेत्र-त्रयाय वौषट् । बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा अस्त्राय फट् ।

गम्भीरां च मदोन्मत्तां स्वर्ण-कान्ति-सम-प्रभाम्, चतुर्भुजां त्रि-नयनां कमलासन-संस्थितां ।
ऊर्ध्व-केश-जटा-जूटां कराल-वदनाम्बुजां, मुद्‌गरं दक्षिणे हस्ते पाशं वामेन धारिणीम् ।
रिपोर्जिह्वां त्रिशूलं च पीत-गन्धानुलेपनाम्, पीताम्बर-धरां सान्द्र-दृढ़-पीन-पयोधराम् ।
हेम-कुण्डल-भूषां च पीत-चन्द्रार्ध-शेखराम्, पीत-भूषण-भूषाढ्यां स्वर्ण-सिंहासने स्थिताम् ।
स्वानन्दानु-मयी देवी रिपु-स्तम्भन-कारिणी, मदनस्य रतेश्चापि प्रीति-स्तम्भन-कारिणी ।
महा-विद्या महा-माया महा-मेधा महा-शिवा, महा-मोहा महा-सूक्ष्मा साधकस्य वर-प्रदा ।
राजसी सात्त्विकी सत्या तामसी तैजसी स्मृता, तस्याः स्मरण-मात्रेण त्रैलोक्यं स्तंभयेत् क्षणात् ।
गणेशो वटुकश्चैव योगिन्यः क्षेत्रपालकः, गुरवश्च गुणास्तिस्रो बगला स्तम्भिनी तथा ।
जृम्भिणी मोदिनी चाम्बा बालिका भूधरा तथा, कलुषा करुणा धात्री काल-कर्षिणिका परा ।
भ्रामरी मन्द-गमना भगस्था चैव भासिका, ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी रमा ।
वाराही च तथेन्द्राणी चामुण्डा भैरवाष्टकम्, सुभगा प्रथमा प्रोक्ता द्वितीया भग-मालिनी ।
भगवाहा तृतीया तु भग-सिद्धाऽब्धि-मध्यगा, भगस्य पातिनी पश्चात् भग-मालिनी षष्ठिका ।
उड्डीयान-पीठ-निलया जालन्धर-पीठ-संस्थिता, काम-रूपे तथा संस्था देवी-त्रितयमेव च ।
सिद्धौघा मानवौघाश्च दिव्यौघा गुरवः क्रमात्, क्रोधिनी जृम्भिणीचैव देव्याश्चोभय-पार्श्वयोः ।
पूज्यास्त्रिपुर-नाथश्च योनि-मध्येऽम्बिका-युतः, स्तम्भिनी या महा-विद्या सत्यं सत्यं वरानने ।
एषा सा वैष्णवी माया विद्यां यत्नेन गोपयेत्, ब्रह्मास्त्रा-देवतायाश्च हृदयं परि-कीर्तितम् ।
ब्रह्मास्त्रं त्रिषु लोकेषु दुष्प्राप्यं त्रि-दशैरपि, गोपनीयं प्रयत्नेन न देयं यस्य कस्यचित् ।
गुरु-भक्ताय दातव्यं वत्सरं दुःखिताय वै, मातृ-पितृ-रतो यस्तु सर्व-ज्ञान-परायणः ।
तस्यै देयमिदं देवि ! बगला-हृदयं परम्, सर्वार्थ-साधकं दिव्यं पठनाद् भोग-मोक्षदम् ।

श्रीबगलाष्टोत्तर-शत-नाम स्तोत्रम्

श्रीनारद उवाच—

भगवन्, देव-देवेश ! सृष्टि-स्थिति-लयात्मकं । शतमष्टोत्तरं नाम्नां बगलाया वदाधुना ॥

श्रीभगवानुवाच—

श्रृणु वत्स ! प्रवक्ष्यामि नाम्नामष्टोत्तरं शतं । पीताम्बर्याः महा-देव्याः स्तोत्रं पाप-प्रणाशनं ॥

यस्य प्रपठनात् सद्यो वादी मूको भवेत् क्षणात् । रिपूणां स्तम्भनं याति सत्यं सत्यं वदाम्यहं ॥

विनियोग—ॐ अस्य श्रीपीताम्बरायाः शतमष्टोत्तरं नाम्नां स्तोत्रस्य श्रीसदाशिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीपीताम्बरा देवता, श्रीपीताम्बरा-प्रीतये पाठे विनियोगः ।

अष्टोत्तर-शतनाम-स्तोत्रं—

ॐ बगला विष्णु-वनिता विष्णु-शङ्कर-भामिनी । बहुला वेद-माता च महा-विष्णु-प्रसूरपि ॥

महा-मत्स्या महा-कूर्मा महा-वाराह-रूपिणी । नरसिंह-प्रिया रम्या वामना वटु-रूपिणी ॥

जामदग्न्य-स्वरूपा च रामा राम-प्रपूजिता । कृष्णा कपर्दिनी कृत्या कलहा कल-कारिणी ॥

बुद्धि-रूपा बुद्ध-भार्या बौद्ध-पाखण्ड-खण्डिनी । कल्कि-रूपा कलि-हरा कलि-दुर्गति-नाशिनी ॥

कोटि-सूर्य-प्रतीकाशा कोटि-कन्दर्प-मोहिनी । केवला कठिना काली कला कैवल्य-दायिनी ॥

केशवी केशवाराध्या किशोरी केशव-स्तुता । रुद्र-रूपा रुद्र-मूर्तिः रुद्राणी रुद्र-देवता ॥

नक्षत्र-रूपा नक्षत्रा नक्षत्रेश-प्रपूजिता । नक्षत्रेश-प्रिया नित्या नक्षत्र-पति-वन्दिता ॥

नागिनी नाग-जननी नाग-राज-प्रवन्दिता । नागेश्वरी नाग-कन्या नागरी च नगात्मजा ॥

नगाधिराज-तनया नग-राज-प्रपूजिता । नवीना नीरदा पीता श्यामा सौन्दर्य-कारिणी ॥

रक्ता नीला घना शुभ्रा श्वेता सौभाग्य-दायिनी। सुन्दरी सौभगा सौम्या स्वर्णाभा स्वर्गति-प्रदा ॥

रिपु-त्रास-करी रेखा शत्रु-संहार-कारिणी । भामिनी च तथा माया स्तम्भिनी मोहिनी शुभा ॥

राग-द्वेष-करी रात्री रौरव-ध्वंस-कारिणी । यक्षिणी सिद्ध-निवहा सिद्धेशा सिद्धि-रूपिणी ॥

लङ्का-पति-ध्वंस-करी लङ्केश-रिपु-वन्दिता । लङ्का-नाथ-कुल-हरा महा-रावण-हारिणी ॥

देव-दानव-सिद्धौघ-पूजिता परमेश्वरी । पराणु-रूपा परमा पर-तन्त्र-विनाशिनी ॥

वरदा वरदाऽऽराध्या वर-दान-परायणा । वर-देश-प्रिया वीरा वीर-भूषण-भूषिता ॥

वसुदा बहुदा वाणी ब्रह्म-रूपा वरानना । बलदा पीत-वसना पीत-भूषण-भूषिता ॥

पीत-पुष्प-प्रिया पीत-हारा पीत-स्वरूपिणी । शुभं ते कथितं विप्र ! नाम्नामष्टोत्तरं शतं ॥

यः पठेत् पाठयेद् वापि श्रृणुयाद् वा समाहितः । तस्य शत्रुः क्षयं सद्यो याति वै नात्र संशयः ॥

प्रभात-काले प्रयतो मनुष्यः पठेत् सु-भक्त्या परिचिन्त्य पीताम् ।

द्रुतं भवेत् तस्य समस्त-वृद्धिर्विनाशमायाति च तस्य शत्रुः ॥

॥ श्रीविष्णु-यामले श्रीनारद-विष्णु-सम्वादे श्रीबगलाष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

श्रीबगलामुखी सहस्रनाम-स्तोत्रम्

सुरालय-प्रधाने तु देव-देवं महेश्वरं । शैलाधिराज-तनया संग्रहे तमुवाच ह ।।

श्रीदेव्युवाच

परमेष्ठिन्, परं धाम, प्रधान, परमेश्वर! नाम्नां सहस्रं बगलामुख्यास्त्वं ब्रूहि वल्लभ ।।

श्रीईश्वरोवाच

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि नाम-धेय-सहस्रकं । पर-ब्रह्मास्त्र-विद्यायाश्चतुर्वर्ग-फल-प्रदम् ।।

गुह्याद् गुह्य-तरं देवि! सर्व-सिद्धैक-वन्दितं । अति-गुप्त-तरं सर्व-विद्या-तन्त्रेषु गोपितं ।।

विशेषतः कलियुगे महा-सिद्धयोघ-दायि तत् । गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयं प्रयत्नतः ।।

अप्रकाश्यमिदं सत्यं स्व-योनिरिव सुव्रते! रोधिनी विघ्न-संघानां मोहिनी सर्व-योषितां ।।

पुरा चैकार्णवे घोरे काले परम-भैरवः । सुन्दरी-सहितो देवः केशवः क्लेश-नाशनः ।।

उरगासनमासीनो योग-निद्रामुपागमत् । निद्रा-काले च ते काले मया प्रोक्तः सनातनः ।।

महा-स्तम्भ-करं देवो-स्तोत्रं वा शत-नामकं । सहस्र-नाम परमं वद देवस्य कस्यचित् ।।

श्रीभगवानुवाच

शृणु शङ्कर, देवेश ! परमाति-रहस्यकम् ।।

अजोऽहं यत्प्रसादेन विष्णुः सर्वेश्वरेश्वरः । गोपनीयं प्रयत्नेन प्रकाशात् सिद्धि-हानि-कृत्।।

ॐ अस्य श्रीपीताम्बरा-सहस्रनाम-स्तोत्र-मन्त्रस्य भगवान् सदाशिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीजगद्-वश्यकरो पीताम्बरा देवता, सर्वाभीष्ट-सिद्धयर्थे पाठे विनियोगः ।

पीताम्बर-परीधानां पीनोन्नत-पयोधराम् । जटा-मुकुट-शोभाढयां पीत-भूमि सुखासनां ।।

शत्रोर्जिह्वां मुद्गरं च बिभ्रतीं परमां कलाम् । सर्वागम-पुराणेषु विख्यातां भुवन-त्रये ।।

सृष्टि-स्थिति-विनाशानामादि-भूतां महेश्वरीं । गोप्यां सर्व-प्रयत्नेन शृणु तां कथयामि ते ।।

जगद्-विध्वंसिनीं देवीमजरामर-कारिणीं । तां नमामि महा-मायां महदैश्वर्य-दायिनीं ।।

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य स्थिर-मायां ततो वदेत् । बगलामुखि सर्वेति दुष्टानां वाचमेव च ।।

मुखं पदं स्तम्भयेति जिह्वां कीलय बुद्धिमत् । विनाशयेति तारं च स्थिर-मायां ततो वदेत् ।।

वह्नि-प्रियां ततो मन्त्रश्चतुर्वर्ग-फल-प्रदः । ब्रह्मास्त्रं ब्रह्म-विद्या च ब्रह्म-माया सनातनी ।।

ब्रह्मेशी ब्रह्म-कैवल्यं बगला ब्रह्म-चारिणी । नित्यानन्दा नित्य-सिद्धा नित्य-रूपा निरामया ।।

सन्धारिणी महा-माया कटाक्ष-क्षेम-कारिणी । कमला विमला लीला रत्न-कान्तिर्गुणाश्रिता ।।

मङ्गला विजया जाया सर्व-मङ्गल-कारिणी। कामिनी कामनी काम्या कामुका काम-चारिणी ।।

काम-प्रिया काम-रता कामा काम-स्वरूपिणी । कामाख्या काम-बीजस्था काम-पीठ-निवासिनी।।

कामदा कामहा काली कपाली च करालिका । कंसारिः कमला कामा कैलासेश्वर-वल्लभा ॥
कात्यायनी केशवा च करुणा कामकेलि-भुक् । क्रिया कीर्तिः कृत्तिका च काशिका मथुरा शिवा॥
कालाक्षी कालिका काली धवलानन-सुन्दरी । खेचरी च ख-मूर्तिश्च क्षुद्रा क्षुद्र-क्षुधा वरा ॥
खड्ग-हस्ता खड्ग-रता खड्गिनी खर्पर-प्रिया । गङ्गा गौरी गामिनी च गीता गोत्र-विवर्द्धिनी॥
गोधरा गोकरा गोधा गन्धर्व-पुर-वासिनी । गन्धर्वा गन्धर्व-कला गोपनी गरुड़ासना ॥
गोविंद-भावा गोविंदा गांधारी गन्ध-मादिनी । गौराङ्गी गोपिका-मूर्तिर्गोपी गोष्ठ-निवासिनी ॥
गन्धा गजेन्द्रगा मान्या गदाधर-प्रिया ग्रहा । घोर-घोरा घोर-रूपा घन-श्रोणी घन-प्रभा ॥
दैत्येन्द्र-प्रबला घण्टा-वादिनी घोर-निःस्वना । डाकिन्युमा उपेन्द्रा च उर्वशी उरगासना ॥
उत्तमा उन्नता उन्ना उत्तम-स्थान-वासिनी । चामुण्डा मुण्डिका चण्डी चण्ड-दर्प-हरेति च ॥
उग्रचण्डा चण्ड-चण्डा चण्ड-दैत्य-विनाशिनी । चण्ड-रूपा प्रचण्डा च चण्डा चण्ड-शरीरिणी ॥
चतुर्भुजा प्रचण्डा च चराचर-निवासिनी । छत्र-प्राय-शिरोवाहा छला छल-तरा छली ॥
छत्र - रूपा छत्र-धरा छत्रिय-छय-कारिणी । जया च जय-दुर्गा च जयन्ती जयदा परा ॥
जायिनी जयिनी ज्योत्स्ना जटाधर-प्रियाऽजिता । जितेंद्रिया जित-क्रोधा जय-माना जनेश्वरी ॥
जित-मृत्युर्जरातीता जाह्नवी जनकात्मजा । झंकारा झंझरी झण्टा झंकारी झक-शोभिनी ॥
झखा झमेशा झंकारी योनि-कल्याण-दायिनी । झर्झरा झमुरी झारा झरा झर-तरा परा ॥
झंझा झमेता झंकारी झणा कल्याण-दायिनी । ईमना मानसी चिन्त्या ईमुना शंकर-प्रिया ॥
टंकारी टिटिका टीका टंकिनी च ट-वर्गगा । टापा टोपा टटपतिष्टमनी टमन-प्रिया ॥
ठकार-धारिणी ठीका ठंकरी ठिकर-प्रिया । ठेकठासा ठकरती ठामिनी ठमन-प्रिया ॥
डारहा डाकिनी डारा डामरा डमर-प्रिया । डाकिनी डड-युक्ता च डमरू-कर-वल्लभा ॥
ढक्का ढक्की ढक्क-नादा ढोल-शब्द-प्रबोधिनी । ढामिनी ढामन-प्रीता ढग-तन्त्र-प्रकाशिनी ॥
अनेक-रूपिणी अम्बा अणिमा-सिद्धि-दायिनी । अमन्त्रिणी अणु-करी अणुमद्-भानु-संस्थिता ॥
तारा तन्त्रावती तन्त्र-तत्व-रूपा तपस्विनी । तरङ्गिणी तत्व-परा तन्त्रिका तन्त्र-विग्रहा ॥
तपो-रूपा तत्व-दात्री तपः-प्रीति-प्रधर्षिणी । तन्त्र यन्त्रार्चन-परा तलातल-निवासिनी ॥
तल्पदा त्वल्पदा काम्या स्थिरा स्थिरतरा स्थितिः । स्थाणुप्रिया स्थलपरा स्थिता स्थानप्रदायिनी
दिगम्बरा दया-रूपा दावाग्नि-दमनी दमा । दुर्गा दुर्ग-परा देवी दुष्ट-दैत्य-विनाशिनी ॥
दमन-प्रमदा दैत्य-दया दान-परायणा । दुर्गार्ति-नाशिनी दान्ता दम्भिनी दम्भ-वर्जिता ॥
दिगम्बर-प्रिया दम्भा दैत्य-दम्भ-विदारिणी । दमना दन्त-सौन्दर्या दानवेन्द्र-विनाशिनी ॥
दयाधारा च दमनी दर्भ-पत्र-विलासिनी । धरिणी धारिणी धात्री धराधर-धर-प्रिया ॥
धराधर-सुता देवी सुधर्मा धर्म-चारिणी । धर्मज्ञा धवला धूला धनदा धन-वर्द्धिनी ॥

घोराऽघोरा घोर-तरा घोर-सिद्धि-प्रदायिनी । धन्वन्तरि-धरा धीरा ध्येया ध्यान-स्वरूपिणी ॥
नारायणी नारसिंही नित्यानन्दा नरोत्तमा । नक्ता नक्तवती नित्या नील-जीमूत-सन्निभा ॥
नीलाङ्गी नील-वस्त्रा च नील-पर्वत-वासिनी । सुनील-पुष्प-खचिता नील-जम्बु-सम-प्रभा ॥
नित्याख्या षोडशी विद्या नित्या नित्य-सुखावहा । नर्मदा नन्दनाऽऽनन्दा नन्दानन्द-विवर्द्धिनी ॥
यशोदानन्द-तनया नन्दनोद्यान-वासिनी । नागान्तका नाग-वृद्धा नाग-पत्नी च नागिनी ॥
नमिताशेष-जनता नमस्कार-वती नमः । पीताम्बरा पार्वती च पीताम्बर-विभूषिता ॥
पीत-माल्याम्बर-धरा पीताभा पिङ्ग-मूर्द्धजा । पीत-पुष्पार्चन-रता पीत-पुष्प-समर्चिता ॥
पर-प्रभा पितृ-पतिः पर-सैन्य-विनाशिनी । परमा पर-तन्त्रा च पर-मन्त्रा परात्परा ॥
परा-विद्या परा-सिद्धिः परा-स्थान-प्रदायिनी । पुष्पा पुष्पवती नित्या पुष्प-माला-विभूषिता ॥
पुरातना पूर्व-परा पर-सिद्धि-प्रदायिनी । पीता-नितम्बिनी पीता पीनोन्नत-पयस्विनी ॥
प्रेमा प्र-मध्यमाशेषा पद्म-पत्र-विलासिनी । पद्मावती पद्म-नेत्रा पद्मा पद्म-मुखी परा ॥
पद्मासना पद्म-प्रिया पद्म-राग-स्वरूपिणी । पावनी पालिका पात्री परदा वरदा शिवा ॥
प्रेत-संस्था परानन्दा पर-ब्रह्म-स्वरूपिणी । जिनेश्वर-प्रिया-देवी पशु-रक्त-रति-प्रिया ॥
पशु-मांस-प्रियाऽपर्णा परामृत-परायणा । पाशिनी पाशिका चापि पशुघ्नी पशु-भक्षिणी ॥
फुल्लारविन्द-वदना फुल्लोत्पल-शरीरिणी । परानन्द-प्रदा वीणा पशु-पाश-विनाशिनी ॥
फूत्कारा फूत्परा फेनी फुल्लेंदीवर-लोचना । फट्मंत्रा स्फटिका स्वाहा स्फोटा च फट्-स्वरूपिणी ॥
स्फाटिका घुटिका घोरा स्फटिकाद्रि-स्वरूपिणी । वराङ्गना वर-धरा वाराही वासुकी वरा ॥
बिंदुस्था बिन्दुनी वाणी बिंदु-चक्र-निवासिनी । विद्याधरी विशालाक्षी काशी-वासि-जन-प्रिया ॥
वेद-विद्या विरूपाक्षी विश्व-युग् बहु-रूपिणी । ब्रह्म-शक्तिर्विष्णु-शक्तिः पञ्च-वक्त्रा शिव-प्रिया ॥
वैकुण्ठ-वासिनी देवी वैकुण्ठ-पद-दायिनी । ब्रह्म-रूपा विष्णु-रूपा पर-ब्रह्म-महेश्वरी ॥
भव-प्रिया भवोद्भावा भव-रूपा भवोत्तमा । भवापारा भवाधारा भाग्य-वत्-प्रिय-कारिणी ॥
भद्रा सुभद्रा भवदा शुम्भ-दैत्य-विनाशिनी । भवानी भैरवी भीमा भद्रकाली सुभद्रिका ॥
भगिनी भग-रूपा च भग-माना भगोत्तमा । भग-प्रिया भगवती भग-वासा भगाकरा ॥
भग-सृष्टा भाग्यवती भग-रूपा भगासिनी । भग-लिङ्ग-प्रिया देवी भग-लिङ्ग-परायणा ॥
भग-लिङ्ग-स्वरूपा च भग-लिङ्ग-विनोदिनी । भग-लिङ्ग-रता देवी भग-लिङ्ग-निवासिनी ॥
भग-माला भग-कला भगाधारा भगाम्बरा । भग-वेगा भग-भूषा भगेन्द्रा भाग्य-रूपिणी ॥
भग-लिङ्गाङ्ग-सम्भोगा भग-लिङ्गासवावहा । भग-लिङ्ग-समाधुर्या भग-लिङ्ग-निवेशिता ॥
भग-लिङ्ग-सुपूज्या च भग-लिङ्ग-समन्विता । भग-लिङ्ग-विरक्ता च भग-लिङ्ग-समावृता ॥

माधवी माधवी-मान्या मधुरा मधु-मानिनी । मन्द-हासा महा-माया मोहिनी महदुत्तमा ॥
महा-मोहा महा-विद्या महा-घोरा महा-स्मृतिः । मनस्विनी मान-वती मोदिनी मधुरानना ॥
मेनका मानिनी मान्या मणि-रत्न-विभूषणा । मल्लिका मौलिका माला मालाधर-मदोत्तमा ॥
मदना सुन्दरी मेधा मधु-मत्ता मधु-प्रिया । मत्त-हंसा समोन्नासा मत्त-सिंह-महासना ॥
महेन्द्र-वल्लभा भीमा मौल्यं च मिथुनात्मजा । महा-काला महा-काली महा-बुद्धिर्महोत्कटा ॥
माहेश्वरी महा-माया महिषासुर-घातिनी । मधुरा कीर्ति-मत्ता च मत्त-मातङ्ग-गामिनी ॥
मद-प्रिया मांस-रता मत्त-युक्-काम-कारिणी । मैथुन्य-वल्लभा देवी महानन्दा महोत्सवा ॥
मरीचिर्मारतिर्माया मनो-बुद्धि-प्रदायिनी । मोहा मोक्षा महा-लक्ष्मीर्महत्पद-प्रदायिनी ॥
यम-रूपा च यमुना जयन्ती च जय-प्रदा । याम्या यम-वती युद्धा यदोः कुल-विवर्द्धिनी ॥
रमा रामा राम-पत्नी रत्न-माला रति-प्रिया । रत्न-सिंहासनस्था च रत्नाभरण-मण्डिता ॥
रमणी रमणीया च रत्या रस-परायणा । रसानन्दा रसवती रघूणां कुल-वर्द्धिनी ॥
रमणारि-परिभ्राज्या रैधा राधिक-रत्नजा । रावी रस-स्वरूपा च रात्रि-राज-सुखावहा ॥
ऋतुजा ऋतुदा ऋद्धा ऋतु-रूपा ऋतु-प्रिया । रक्त-प्रिया रक्त-वती रङ्गिणी रक्त-दन्तिका ॥
लक्ष्मीर्लज्जा च लतिका लीला लग्नानिताक्षिणी । लीला लीलावती लोमा हर्षाह्लादन-पट्टिका॥
ब्रह्म-स्थिता ब्रह्म-रूपा ब्रह्माणी वेद-वन्दिता । ब्रह्मोद्भवा ब्रह्म-कला ब्रह्माणी ब्रह्म-बोधिनी ॥
वेदाङ्गना वेद-रूपा वनिता विनता वसा । बाला च युवती वृद्धा ब्रह्म-कर्म-परायणा ॥
विंध्यस्था विंध्य-वासी च विंदु-युक् विंदु-भूषणा । विद्यावती वेदधारी व्यापिका बर्हिणीकला ॥
वामाचार-प्रिया वह्निर्वामाचार-परायणा । वामाचार-रता देवी वामदेव - प्रियोत्तमा ॥
बुद्धेन्द्रिया विबुद्धा च बुद्धाचरण-मालिनी । बन्ध-मोचन-कर्त्री च वारुणा वरुणालया ॥
शिवा शिव-प्रिया शुद्धा शुद्धाङ्गी शुक्ल-वर्णिका । शुक्ल-पुष्प-प्रिया शुक्ला शिव-धर्म-परायणा ॥
शुक्लस्था शुक्लिनी शुक्ल-रूपा शुक्ल-पशु-प्रिया । शुक्रस्था शुक्रिणी शुक्रा शुक्र-रूपा च शुक्रिका॥
षण्मुखी च षडङ्गा च षट्-चक्र-विनिवासिनी । षड्-ग्रन्थि-युक्ता षोढा च षण्माता च षडात्मिका॥
षडङ्ग-युवती देवी षडङ्ग-प्रकृतिर्वशी । षडानना षड्रसा च षष्ठी षष्ठेश्वरी प्रिया ॥
षड्ज-वादा षोडशी च षोढा-न्यास-स्वरूपिणी । षट्-चक्र-भेदन-करी षट्-चक्रस्थ-स्वरूपिणी ॥
षोडश-स्वर-रूपा च षण्मुखी षट्-पदान्विता । सनकादि-स्वरूपा च शिव-धर्म-परायणा ॥
सिद्धा सिद्धेश्वरी शुद्धा सुर-माता स्वरोत्तमा । सिद्ध-विद्या सिद्ध-माता सिद्धा सिद्ध-स्वरूपिणी ॥
हरा हरि-प्रिया हारा हरिणी हार-युक् तथा । हरि-रूपा हरि-धारा हरिणाक्षी हरि-प्रिया ॥
हेतु-प्रिया हेतु-रता हिताहित-स्वरूपिणी । क्षमा क्षमावती क्षोता क्षुद्र-घण्टा-विभूषणा ॥

क्षयङ्करी क्षितीशा च क्षीण-मध्य-सुशोभना । अजानन्ता अपर्णा च अहल्या शेष-शायिनी ।।
स्वान्तर्गता च साधूनामन्तरानन्त-रूपिणी । अरूपा अमला चार्द्धा अनन्त-गुण-शालिनी ।।
स्व-विद्या विद्यका विद्याविद्या चार्विन्दु-लोचना । अपराजिता जात-वेदा अजपा अमरावती ।।
अल्पा स्वल्पा अनल्पाऽऽद्या अणिमा-सिद्धि-दायिनी । अष्ट-सिद्धि-प्रदा देवी रूप-लक्षण-संयुता ।।
अरविन्द-मुखी देवी भोग-सौख्य-प्रदायिनी । आदि-विद्या आदि-भूता आदि-सिद्धि-प्रदायिनी ।।
सीत्कार-रूपिणी देवी सर्वासन-विभूषिता । इन्द्र-प्रिया च इन्द्राणी इन्द्र-प्रस्थ-निवासिनी ।।
इन्द्राक्षी इन्द्र-वज्रा च इन्द्रमद्योक्षिणी तथा । ईला काम-निवासा च ईश्वरीश्वर-वल्लभा ।।
जननी चेश्वरी दीना भेदा चेश्वर-कर्मकृत् । उमा कात्यायनी ऊर्ध्वा मीना चोत्तर-वासिनी ।।
उमा-पति-प्रिया देवी शिवा चोङ्कार-रूपिणी । उरगेन्द्र-शिरो-रत्ना उरगोरग-वल्लभा ।।
उद्यान-वासिनी माला प्रशस्त-मणि-भूषणा । ऊर्ध्व-दन्तोत्तमाङ्गी च उत्तमा चोर्ध्व-केशिनी ।।
उमा सिद्धि-प्रदा या च उरगासन-संस्थिता । ऋषि-पुत्री ऋषिच्छन्दा ऋद्धि-सिद्धि-प्रदायिनी ।।
उत्सवोत्सव-सीमन्ता कामिका च गुणान्विता । एला एकार-विद्या च एणी विद्याधरा तथा ।।
ॐकार-वलयोपेता ॐकार-परमा - कला । ॐ वद वद वाणी च ॐकाराक्षर-मण्डिता ।।
ऐन्द्री कुलिश-हस्ता च ॐलोक-पर-वासिनी । ॐकार-मध्य-बीजा च ॐनमो-रूप-धारिणी ।।
पर-ब्रह्म-स्वरूपा च अंशुकांशुक-वल्लभा । ॐकारा अः फट्-मन्त्रा च अक्षाक्षर-विभूषिता ।।
अमन्त्रा मन्त्र-रूपा च पद-शोभा-समन्विता । प्रणवोङ्कार-रूपा च प्रणवोच्चार-भाक् पुनः ।।
ह्लींकार-रूपा ह्लींकारी वाग्वीजाक्षर-भूषणा । हृल्लेखा सिद्धि-योगा च हृत्-पद्मासन-संस्थिता ।।
वीजाख्या नेत्र-हृदया ह्लीं-वीजा भुवनेश्वरी । क्लीं-कामराजा क्लिन्ना च चतुर्वर्ग-फल-प्रदा ।।
क्लींक्लींक्लीं-रूपिकादेवी क्रींक्रींक्रीं-नामधारिणी । कमलाशक्तिवीजा च पाशांकुश-विभूषिता ।।
श्रींश्रींकारा महा-विद्या श्रद्धा श्रद्धावती तथा । ॐऐंक्लींह्लींश्रीं परा च क्लींकारी परमा कला ।।
ह्लींक्लींश्रींकार-रूपा च सर्व-कर्म-फल-प्रदा । सर्वाढ्या सर्व-देवी च सर्व-सिद्धि-प्रदा तथा ।।
सर्वज्ञा सर्व-शक्तिश्च वाग्-विभूति-प्रदायिनी । सर्व-मोक्ष-प्रदा-देवी सर्व-भोग-प्रदायिनी ।।
गुणेन्द्र-वल्लभा वामा सर्व-शक्ति-प्रदायिनी । सर्वानन्द-मयी चैव सर्व-सिद्धि-प्रदायिनी ।।
सर्व-चक्रेश्वरी देवी सर्व-सिद्धेश्वरी तथा । सर्व-प्रियङ्करी चैव सर्व-सौख्य-प्रदायिनी ।।
सर्वानन्द-प्रदा देवी ब्रह्मानन्द-प्रदायिनी । मनो-वांछित-दात्री च मनो-बुद्धि-समन्विता ।।
अकारादि-क्षकारान्ता दुर्गा दुर्गार्ति-नाशिनी । पद्म-नेत्रा सुनेत्रा च स्वधा स्वाहा वषट्-करी ।।
स्व-वर्गा देव-वर्गा चतुर्वर्गा च समन्विता । अन्तःस्था वेश्म-रूपा च नव-दुर्गा नरोत्तमा ।।
तत्त्व-सिद्धि-प्रदा नीला तथा नील-पताकिनी । नित्य-रूपा निशाकारी स्तंभिनी मोहिनीति च।।

वशङ्करी तथोच्चाटी उन्मादाकर्षिणीति च । मातङ्गी मधुमत्ता च अणिमा लघिमा तथा ॥
सिद्धा मोक्ष-प्रदा नित्या नित्यानन्द-प्रदायिनी । रक्ताङ्गी रक्त-नेत्रा च रक्त-चन्दन-भूषिता ॥
स्वल्प-सिद्धिः सु-कल्पा च दिव्य-चारण-शुक्रभा । संक्रांतिः सर्व-विद्या च सप्त-वासर-भूषिता ॥
प्रथमा च द्वितीया च तृतीया च चतुर्थिका । पञ्चमी चैव षष्ठी च विशुद्धा सप्तमी तथा ॥
अष्टमी नवमी चैव दशम्येकादशी तथा । द्वादशी त्रयोदशी च चतुर्दश्यथ पूर्णिमा ॥
अमावास्या तथा पूर्वा उत्तरा परि-पूर्णिमा । खड्गिनी चक्रिणी घोरा गदिनी शूलिनी तथा ॥
भुशुण्डी चापिणी वाणा सर्वायुध-विभूषणा । कुलेश्वरी कुल-वती कुलाचार-परायणा ॥
कुल-कर्म-सुरक्ता च कुलाचार-प्रवर्द्धिनी । कीर्तिः श्रीश्च रमा रामा धर्मायै सततं नमः ॥
क्षमा धृतिः स्मृतिर्मेधा कल्प-वृक्ष-निवासिनी । उग्रा उग्र-प्रभा गौरी वेद-विद्या-विबोधिनी ॥
साध्या सिद्धा सुसिद्धा च विप्र-रूपा तथैव च । काली कराली काल्या च काल-दैत्य-विनाशिनी॥
कौलिनी कालिका चैव कचटतप-वर्णिका । जयिनी जय-युक्ता च जयदा जृम्भिणी तथा ॥
स्राविणी द्राविणी देवी भरुण्डा विन्ध्य-वासिनी । ज्योतिर्भूता च जयदा ज्वाला-मालासमाकुला॥
भिन्ना भिन्न-प्रकाशा च विभिन्ना भिन्न-रूपिणी । अश्विनी भरणी चैव नक्षत्र-सम्भवान्विता ॥
काश्यपी विनताख्याता दितिजा दितिरेव च । कीर्तिः काम-प्रिया देवी कीर्त्या कीर्ति-विवर्द्धिनी॥
सद्यो मांस-समालब्धा सद्यश्छिन्नासि-शङ्करा । दक्षिणा चोत्तरा पूर्वा पश्चिमा दिक् तथैव च ॥
अग्नि-नैर्ऋति-वायव्या ऐशानीदिक्तथा स्मृता । ऊर्ध्वाङ्गाधो-गताश्वेता कृष्णा रक्ता च पीतका॥
चतुर्वर्गा चतुर्वर्णा चतुर्मात्रात्मिकाक्षरा । चतुर्मुखी चतुर्वेदा चतुर्विद्या चतुर्मुखा ॥
चतुर्गणा चतुर्माता चतुर्वर्ग-फल-प्रदा । धात्री विधात्री मिथुना नारी नायक-वासिनी ॥
सुरा मुदा मुद-वती मोदिनी मेनकात्मजा । ऊर्ध्व-काली सिद्धि-काली दक्षिणा कालिका शिवा ॥
नील्या सरस्वती सत्वा बगला छिन्नमस्तका । सर्वेश्वरी सिद्ध-विद्या परा परम - देवता ॥
हिंगुली हिंगुलाङ्गी च हिंगुलाधर-वासिनी । हिंगुलोत्तम-वर्णाभा हिंगुलाभरणा च सा ॥
जाग्रती च जगन्माता जगदीश्वर-वल्लभा । जनार्दन-प्रिया देवी जय-युक्ता जय-प्रदा ॥
जगदानन्द-कारी च जगदाह्लाद-कारिणी । ज्ञान-दान-करी यज्ञा जानकी जनक-प्रिया ॥
जयन्ती जयदा नित्या ज्वलदग्नि-सम-प्रभा । बिम्बाधरा च बिम्बोष्ठी कैलासाचल-वासिनी ॥
विभवा वडवाग्निश्च अग्नि-होत्र-फल-प्रदा । मन्त्र-रूपा परा-देवी तथैव गुरु-रूपिणी ॥
गया गङ्गा गोमती च प्रभासा पुष्कराऽपि च । विन्ध्याचल-रता देवी विन्ध्याचल-निवासिनी॥
बहू बहु-सुन्दरी च कंसासुर-विनाशिनी । शूलिनी शूल-हस्ता च वज्रा वज्र-धरापि च ॥
दुर्गा शिवा शान्ति-करी ब्रह्माणी ब्राह्मण-प्रिया । सर्व-लोक-प्रणेत्री च सर्व-रोग-हराऽपि च ॥
मङ्गला शोभना शुद्धा निष्कला परमा कला । विश्वेश्वरी विश्व-माता ललिता हसितानना ॥

सदाशिवा उमा क्षेमा चण्डिका चण्ड-विक्रमा । सर्व-देव-मयी देवी सर्वागम-भयापहा ।।
ब्रह्मेश-विष्णु-नमिता सर्व-कल्याण-कारिणी । योगिनी योग-माता च योगीन्द्र-हृदय-स्थिता ।।
योगि-जाया योग-वती योगीन्द्रानन्द-योगिनी । इन्द्रादि-नमिता देवी ईश्वरी चेश्वर-प्रिया ।।
विशुद्धिदा भय-हरा भक्त-द्वेषि-भयङ्करी । भव-वेषा कामिनी च भरुण्डा भय-कारिणी ।।
बलभद्र-प्रियाकारा संसारार्णव-तारिणी । पञ्च-भूता सर्व-भूता विभूतिर्भूति-धारिणी ।।
सिंह-वाहा महा-मोहा मोह-पाश-विनाशिनी । मन्दुरा मदिरा मुद्रा मुदा-मुद्गर-धारिणी ।।
सावित्री च महा-देवी पर-प्रिय-विनायिका । यम-दूती च पिङ्गाक्षी वैष्णवी शङ्करी तथा ।।
चन्द्र-प्रिया चन्द्र-रता चन्दनारण्य-वासिनी । चन्दनेन्द्र-समायुक्ता चण्ड-दैत्य-विनाशिनी ।।
सर्वेश्वरी यक्षिणी च किराती राक्षसी तथा । महा-भोग-वती देवी महा-मोक्ष-प्रदायिनी ।।
विश्व-हन्त्री विश्व-रूपा विश्व-संहार-कारिणी । धात्री च सर्व-लोकानां हित-कारण-कामिनी ।।
कमला सूक्ष्मदा देवी धात्री हर-विनाशिनी । सुरेन्द्र-पूजिता सिद्धा महा-तेजोवतीति च ।।
परा रूपवती देवी त्रैलोक्याकर्षण-कारिणी । शुभं ते कथितं देवि ! पीता-नाम-सहस्रकम् ।।

फल-श्रुति

पठेद् वा पाठयेद् वापि सर्व-सिद्धिर्भवेत् प्रिये ! इति मे विष्णुना प्रोक्तं महा-स्तम्भ-करं परम् ।।
प्रातःकाले च मध्याह्ने सन्ध्या-काले च पार्वति ! एक-चित्तः पठेदेतत् सर्व-सिद्धिर्भविष्यति ।।
एक-वारं पठेद्यस्तु सर्व - पाप - क्षयो भवेत् । द्वि - वारं पठेद्यस्तु विघ्नेश्वर - समो भवेत् ।।
त्रि-वारं पठनाद् देवि ! सर्वं सिद्ध्यति सर्वथा । स्तवस्यास्य प्रभावेण साक्षाद् भवति सुव्रते ।।
मोक्षार्थी लभते मोक्षं धनार्थी लभते धनम् । विद्यार्थी लभते विद्यां तर्क-व्याकरणान्विताम् ।।
महित्वं वत्सरान्ताच्च शत्रु-हानिः प्रजायते । क्षोणी-पतिर्वशस्तस्य स्मरेण सदृशो भवेत् ।।
यः पठेत् सर्वदा भक्त्या श्रेयस्तु भवति प्रिये ! गणाध्यक्ष-प्रतिनिधिः कविः काव्य-परो वरः ।।
गोपनीयं प्रयत्नेन जननी-जार-वत् सदा । हेतु-युक्तो भवेन्नित्यं शक्ति-युक्तः सदा भवेत् ।।
य इदं पठते नित्यं शिवेन सदृशो भवेत् । जीवन् धर्मार्थ-भोगी स्यान्मृतो मोक्ष-पतिर्भवेत् ।।
सत्यं सत्यं महादेवि ! सत्यं सत्यं न संशयः । स्तवस्यास्य प्रभावेण देवेन सह मोदते ।।
सुचित्ताश्च सुराः सर्वे स्तवराजस्य कीर्तनात् । पीताम्बर-परीधानां पीत-गन्धानुलेपनम् ।।
परमोदय-कीर्तिः स्यात् परतः सुर-सुन्दरि ।।

।। श्रीउत्कट-शम्बरे नागेन्द्र-प्रयाण-तन्त्रे षोडश-साहस्र विष्णु-शङ्कर-सम्वादे
पीताम्बरासहस्रनाम-स्तोत्रम् सम्पूर्णम् ।।